विरुद्ध है । यह नए और युवा मानस की सोच है जो खंडित और रूढ़िग्रस्त समाज को नए रूप में देखना चाहता है । यह समझने की जरूरत है कि छायावादी कवि के युवा मानस का निर्माण जिन युगीन परिस्थितियों में हो रहा था, उसका रोमानी या भावुक होना भी महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है । यह भी स्पष्ट रहना चाहिए कि युगीन प्रवृत्तियाँ एक दूसरे से संबंद्ध होती हैं, सर्वथा अलग-अलग नहीं । यही कारण है कि 'आधुनिक कवि की सामाजिक स्वाधीनता और वैयक्तिक विकास की भावना यदि एक ओर प्राचीन रूढ़ मर्यादाओं के विरोध के रूप में प्रकट हुई तो दूसरी ओर प्रकृति प्रेम के रूप में ।' पंत 'प्रथम रश्मि' में प्रश्न करते हैं –

प्रथम रश्मि का आना रंगिणि,
तूने कैसे पहचाना

यह जिज्ञासा और प्रश्नाकुलता आधुनिक कवि की मौलिक उपलब्धि है । इस जिज्ञासा का संबंध अपने परिवेश और प्रकृति से है । छायावादी कवि प्रकृति की सत्ता को स्थापित करते हैं । उनके काव्य का विपुलांश प्रकृति के सौंदर्य को उद्घाटित करने वाला है । प्रकृति का रहस्य उनमें भय नहीं, आकर्षण उत्पन्न करता है । प्रकृति उनके व्यक्तित्व को खुला और स्वच्छंद वातावरण देती है ।

पंत अपने प्रकृति चित्रण के लिए ख्यात हैं । उन्हें 'प्रकृति का सुकुमार कवि' कहा गया है । इसी तरह, निराला के प्रकृति चित्रों में मानवीकरण, किसान चेतना और क्रांति के स्वर सुनाई पड़ते हैं -

जीर्ण बाहु, है शीर्ण शरीर
तुझे बुलाता कृषक अधीर
ऐ विप्लव के वीर ?

इसी तरह महादेवी प्रकृति की विराटता में अखिल संसार की माँ का करुणामय रूप देखते हुए कहती हैं – "दुलरा दे ना बहला दे ना / यह तेरा शिशु जग है उदास"

छायावादी कवि के लिए प्रकृति विरोधी सत्ता नहीं है । 'कामायनी' में प्रसाद स्पष्ट कहते हैं – 'प्रकृति रही दुर्जेय' । छायावादी कविता प्रकृति से साहचर्य ही नहीं राग का भी संदेश देती है । इक्कीसवीं शताब्दी के इन वर्षों में जब पर्यावरणीय संकट गहराते जा रहे हैं, हम प्राकृतिक विपदाओं के समक्ष लाचार सिद्ध हो रहे हैं । फिर भी प्रकृति से छेड़छाड़ और उस पर विजय पाने की मूढ़ता नहीं छोड़ पा रहे हैं । छायावादी काव्य की प्रकृति हममें आलोचनात्मक विवेक और संवेगात्मक विक्षोभ पैदा करने में समर्थ है ताकि हम विकास के अपने मॉडल को पहचान सकें और अपनी इस 'अकेली धरती' को अधिक सुंदर बना सकें ।

प्रकृतिप्रेम का संबंध देशप्रेम से है । आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है, – "यदि किसी को अपने देश से प्रेम है तो उसे अपने देश के मनुष्य, पशु, पक्षी, लता, गुल्म, पेड़, पत्ते, कण, पर्वत, नदी, निर्झर सबसे प्रेम होगा, सबको वह चाह भरी दृष्टि से देखेगा, सबकी सुध करके विदेश में आँसू बहाएगा । जो यह भी नहीं जानते कि कोयल किस चिड़िया का नाम है ..... वे यदि दस बने-ठने मित्रों के बीच प्रत्येक भारतवासी की औसत आमदनी का पता बताकर देशप्रेम का दावा करें, तो उनसे पूछना चाहिए कि भाइयो, बिना परिचय का यह प्रेम कैसा ?"

वैयक्तिकता का ही एक अभिलक्षण छायावादी कविता में 'कल्पना' की अद्‌भुत उपस्थिति में देखा जा सकता है । कल्पना का उत्स 'मानसिक स्वाधीनता' में है । प्रसाद ने कल्पना की स्तुति में कहा, 'हे कल्पना सुखदान/तुम मनुज जीवन प्राण/ तुम विशद व्योम समान ।' निराला ने तो कविता मात्र को 'कल्पना के कानन की रानी' कहा है ।

छायावादी काव्य की एक अन्य उल्लेखनीय प्रवृत्ति इसकी 'नारी भावना' है । पंत की पंक्ति है - 'देवि माँ सहचरि प्राण ।' छायावादी काव्य में स्त्रियों के लिए आदर और सम्मान भाव ही नहीं, इससे बढ़कर उनके स्वतंत्र अस्तित्व की उद्‌घोषणा भी है । कामायनी में प्रसाद कहते हैं :

तुम भूल गए पुरुषत्व मोह में कुछ सत्ता है नारी की
समरसता है संबंध बनी अधिकार और अधिकारी की

मानवीय सहृदयता और जनतांत्रिक बोध से संपन्न निराला 'तोड़ती पत्थर' में एक मजदूरनी का चित्र खींचते हैं तो 'विधवा' को 'इष्टदेव के मंदिर की पूजा' कहते हैं ।

छायावादी काव्य में सौंदर्य का चित्रण और प्रेम की अभिव्यक्ति प्रायः आदर्शवादी ढंग से हुई है। इसके सर्वाधिक अपवाद निराला की कविताओं में हैं ।

छायावादी काव्य में इन विशेषताओं के अनुरूप ही शिल्पगत वैशिष्ट्य, शब्द चयन, वाक्य विन्यास, प्रतीक योजना तथा छंद गठन आदि मिलते हैं । छायावादी कवियों में पंत के शब्द अपेक्षाकृत छोटे, असंयुक्त वर्ण वाले हैं । प्रसाद के शब्द अधिक प्रगाढ़, मधुमय और नादयुक्त हैं । महादेवी के शब्दों में खनक है। तो निराला के शब्द चयन में अतुलनीय विविधता, संधिसमास युक्त विविध जाति और ध्वनिवाले शब्द तथा उनमें भी अनुप्रासमय संगीत उत्पन्न करने की चेष्टा है ।

छायावादी कवियों ने छंद के बंधन यह कहते हुए तोड़ दिए कि छंदों के साँचे के अनुरूप भावों को मोड़ना भावों के साथ अन्याय करना है । इसी से हिंदी में 'मुक्तछंद' का आरंभ हुआ ।

इनके अतिरिक्त अलंकार योजना, चित्रमय भाषा, लाक्षणिकता, उक्तिवैचित्र्य, अनूठी उपमाओं आदि की दृष्टि से भी छायावादी कविता का शिल्प पक्ष विलक्षण है । उपमाओं की विशिष्टता जानने के लिए निराला की 'तुलसीदास', 'राम की शक्ति पूजा' जैसी कविताएँ द्रष्टव्य हैं ।

अन्य प्रवृत्तियाँ

प्रसाद, निराला, पंत एवं महादेवी के अतिरिक्त भी इस काल में अनेक कवियों ने काव्य साधना की । माखनलाल चतुर्वेदी, सियारामशरण गुप्त, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सुभद्रा कुमारी चौहान आदि इनमें प्रमुख हैं । इनकी कविताएँ राष्ट्रीय-सांस्कृतिक जागरण के संकल्प से भरी थीं । सामाजिक विषमता, भेद-भाव आदि पर भी इन्होंने प्रहार किए । स्वतंत्रता के संघर्ष काल में इनकी कविताओं ने ऐतिहासिक भूमिका निभाई है । छायावादी कविताओं से इनका अलगाव इस रूप में था कि छायावादी कविताओं में राष्ट्रीय जागरण की पुकार सांस्कृतिक जागरण के स्वरों के साथ एकाकार हैं; जबकि इनकी कविताओं में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक जागरण की माँग प्रत्यक्ष और किंचित स्थूल रूप में है ।

प्रमुख कवि

जयशंकर प्रसाद (1889-1937)

प्रसाद जी का जन्म काशी के एक संपन्न परिवार में हुआ था । इन्होंने अपने लेखन की शुरुआत ब्रजभाषा में की थी । 'उर्वशी', 'वनमिलन', 'कानन कुसुम', 'प्रेम पथिक', 'महाराणा का महत्त्व', 'झरना', 'आँसू', 'लहर', 'कामायनी' आदि इनकी काव्य रचनाएँ हैं । प्रसाद का 'आँसू' एक श्रेष्ठ गीतिकाव्य है । इनकी कृति 'झरना' में 'छायावाद' का स्पष्ट एवं मुखर स्वर पहले पहल सुनाई पड़ता है । प्रसाद का महाकाव्य 'कामायनी' स्वयं उनकी और साथ ही छायावाद की श्रेष्ठतम उपलब्धि है ।

जयशंकर प्रसाद बीसवीं शताब्दी की हिंदी कविता के ही नहीं समग्र भारतीय साहित्य के श्रेष्ठ मनीषियों में एक हैं । अनुभूति की गहनता, लाक्षणिक शैली, गीतिमयता, प्रेमानुभूति, सौंदर्यचेतना, कल्पना तत्व, सांस्कृतिक भावना, आदर्शवादी दृष्टि आदि के गुण जो छायावादी काव्य की पहचान हैं, सर्वाधिक रूप से जयशंकर प्रसाद के काव्य में ही मिलते हैं ।

भारत, भारतीय मन और भारतीय जीवन का उत्थान जयशंकर प्रसाद की गहन अनुभूति और प्रौढ़ चिंतन के केंद्र में सदैव रहता है । कामायनी में वे कहते हैं –

औरों को हँसते देखो मनु – हँसो और सुख पाओ
अपने सुख को विस्तृत कर लो सबको सुखी बनाओ

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला (1897-1961)

निराला का जन्म महिषादल (बंगाल) में हुआ था । यों, उनकी मूलभूमि उत्तर प्रदेश उन्नाव जिले का गढ़ाकोला गाँव है । 'अनामिका' निराला की पहली काव्य कृति है । इसके अतिरिक्त 'गीतिका', 'परिमल', 'तुलसीदास', 'कुकुरमुत्ता', 'अणिमा', 'बेला', 'नए पत्ते' आदि इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं । निराला 'मतवाला' और 'समन्वय' जैसे पत्रों के साथ भी जुड़े थे ।

'जूही की कली' इनकी पहली रचना के रूप में ख्यात है और 'पत्रोत्कंठित जीवन का विष' अंतिम । निराला विद्रोह, संघर्ष और सर्जना के कवि हैं । परंपरा को साधकर या उससे विद्रोह कर उसके पार निकल जाना, यह निराला की पहचान है । कथ्य और शिल्प दोनों ही स्तरों पर निराला सर्वाधिक खतरे उठाते हैं । स्वभावतः छायावाद की सर्वोत्कृष्ट उपलब्धियाँ भी इनके ही खाते में हैं ।

निराला में सभाव है और आवेग है । वे हमारे निजी क्षणों के विशिष्ट कवि हैं । उनकी 'सरोज स्मृति' पुत्री की मृत्यु पर लिखी गई 'शोकगीति' है । 'राम की शक्ति पूजा' एक नवीन राम के माध्यम से 'शक्ति की मौलिक कल्पना' प्रस्तुत करते हुए आराधन का प्रत्युत्तर दृढ़ आराधन से देने की संकल्प योजना है । 'राम की शक्ति पूजा' अपने विषयगत गांभीर्य एवं शिल्पगत वैशिष्ट्य के कारण बीसवीं शताब्दी की श्रेष्ठ हिंदी कविताओं में समादृत है । निराला द्विवेदीयुगीन इतिवृत्तात्मकता से विरोध करते हुए छायावाद का नवीन काव्य संस्कार गढ़ते हैं और स्वयं 'कुकुरमुत्ता' जैसी रचनाओं से इन्हें तोड़ते भी हैं । 'विधवा', 'भिक्षुक', 'तोड़ती पत्थर' जैसी रचनाओं से इन्होंने हिंदी कविता में यथार्थवादी दृष्टि विकसित करने में

महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हिंदी की परवर्ती प्रगतिवादी कविता और साहित्य पर उनका स्पष्ट प्रभाव है।

निराला ने जीवन में अनेक कष्ट सहे, इनका जीवन और इनकी कविता अभिन्न है। 'एक और मन रहा राम का जो न थका' कहने वाले निराला की मूल चेतना को इन पंक्तियों से पहचाना जा सकता है –

अभी न होगा मेरा अंत
अभी-अभी तो आया है
मेरे वन में मृदुल वसंत
अभी न होगा मेरा अंत

निराला श्रम, सौंदर्य, देशज जीवन और भारतीय परंपराओं में गहरे समायी आस्तिकता के कवि हैं। ये आधुनिक भाव, जनतांत्रिक बोध, प्रगतिशील मूल्यों और विश्व चेतना के कवि हैं।

सुमित्रानंदन पंत (1900-1970)

पंत जी का जन्म अल्मोड़ा जिले के कौसानी ग्राम में हुआ था। छायावादियों में सबसे पहले स्वीकृति इन्हें ही मिली। इन्हें 'प्रकृति का सुकुमार कवि' कहा गया है। 'गिरजे का घंटा' इनकी पहली कविता है। 'उच्छ्वास', 'ग्रंथि', 'पल्लव', 'गुंजन', 'युगांत', 'युगवाणी', 'ग्राम्या', 'स्वर्ण किरण', 'स्वर्णधूलि', 'कला और बूढ़ा चाँद', 'चिदंबरा' आदि इनकी काव्य कृतियाँ हैं। पंत के 'पल्लव' को 'छायावाद का घोषणापत्र' भी कहा गया। 'चिदंबरा' के लिए इन्हें ज्ञानपीठ सम्मान मिला।

'गुंजन' तक पंत में छायावादी स्वर है पर 'युगांत' से इनका स्वर बदलने लगता है। अपने समय के विभिन्न राजनैतिक-वैचारिक आंदोलनों से पंत प्रेरित-प्रभावित होते रहे हैं। मार्क्सवाद और गाँधीवाद के साथ-साथ इन पर अरविंद दर्शन का भी प्रभाव पड़ा।

पंत की कविताओं का पहला आकर्षण इनकी कोमल भावना और तदनुरूप शब्द योजना है। पंत के काव्य का श्रेष्ठांश इनके प्रकृति चित्रों में मिलता है। इन प्रकृति चित्रों का विस्तार वैयक्तिकता और स्वातंत्र्य चेतना में होता है। केदारनाथ सिंह के शब्दों में, "पंतजी गहरे अर्थों में सुरुचि के कवि हैं, प्रकृति में भी और जीवन में भी। इस सुरुचि में यदि एक ओर गहरी चयनवृत्ति है तो दूसरी ओर एक सच्चा मानव राग भी, जो प्रकृति के धागों को जीवन से बाँधे रहता है। इसीलिए पंत केवल प्रकृति के नहीं प्रकृति में खेलते हुए उस किशोर मानस के कवि हैं, जो वस्तुतः भारतीय नवजागरण का युवा मानस है।"

द्विवेदीयुगीन काव्यभाषा को कलात्मक सौंदर्य प्रदान करने और इस तरह बीसवीं शताब्दी की काव्यभाषा का साँचा गढ़ने में इनका योगदान स्तुत्य है।

महादेवी वर्मा (1907-1987)

महादेवी वर्मा का जन्म उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद में हुआ था। **'नीहार'** इनका प्रथम [illegible] है। 'रश्मि', 'नीरजा', 'सांधिनी', 'दीपशिखा' आदि इनके अन्य काव्य संकलन हैं। 'यामा' में इनके आरंभिक चार संग्रहों की कविताएँ संकलित हैं। 'यामा' के लिए ही इन्हें ज्ञानपीठ सम्मान प्राप्त हुआ था।

मीरा के सैकड़ों वर्षों बाद महादेवी हिंदी कविता में सुनाई पड़नेवाला प्रखर स्त्री स्वर हैं। पर, मीरा की तरह अध्यात्म या ईश्वर की उपस्थिति इनके काव्य में नहीं है। प्रेम, प्रेमजन्य वेदना तथा वेदना का करुणा में अंतरण इनकी कविता में है। इनके काव्य में जीवन जीने की अबाध लालसा भरी हुई है। रामविलास शर्मा ने अपने एक निबंध में महादेवी की काव्य पंक्ति, 'रात के उर में दिवस की चाह का शर हूँ' उद्धृत करते हुए लिखा है, "निराला को छोड़कर किसी भी छायावादी कवि में जीवन की इतनी चाह नहीं है, जितनी महादेवी में। निराशावाद की अंधेरी रात में जीवन-प्रभात की वह चाह महादेवी की रचनाओं में बार-बार दीप्त हो उठती है।"

महादेवी के गीतों में मीरा की तरह विषय-वैविध्य नहीं है, पर इससे इनका महत्त्व कम नहीं हो जाता। इनके शब्दों, शब्दों के अंतराल, और लय संगीत में समायी मौन ऊर्जा अपने प्रभाव में कहीं अधिक मुखर है। छायावाद के अवसान के साथ महादेवी कविता के क्षेत्र में एक तरह से स्थाई मौन साध लेती हैं।

अन्य कवि

माखनलाल चतुर्वेदी (1889-1968)

इनका जन्म मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले के बाबई गाँव में हुआ था। 'एक भारतीय आत्मा' इनका उपनाम था। चतुर्वेदी जी की काव्य रचनाओं में 'हिम किरीटिनी', 'हिमतरंगिनी', 'माता' आदि प्रमुख हैं। इनकी रचनाएं देश के प्रति अगाध प्रेम और आत्मोत्सर्ग की भावना का संचार करती हैं। इन्होंने 'प्रभा', 'कर्मवीर' तथा 'प्रताप' पत्रिकाओं का संपादन भी किया। ये महात्मा गाँधी से भी प्रभावित रहे। 'पुष्प की अभिलाषा', 'कैदी और कोकिला', 'राष्ट्रीय वीणा' आदि इनकी प्रसिद्ध कविताएँ हैं। स्वतंत्रता संग्राम में भी इन्होंने सक्रिय भूमिका निभाई। ये राष्ट्रीय भावधारा के प्रमुख कवि हैं।

सियारामशरण गुप्त (1895-1936)

ये प्रसिद्ध कवि मैथिलीशरण गुप्त के अनुज थे। सियारामशरण गुप्त गाँधीवाद से गहरे प्रभावित थे। 'मौर्य विजय', 'अनाथ', 'दूर्वादल', 'विषाद', 'बापू' आदि इनकी प्रसिद्ध काव्य कृतियाँ हैं।

बालकृष्ण शर्मा नवीन (1897-1960)

नवीन जी का जन्म मध्य प्रदेश के भयाना गाँव में हुआ था। स्वभाव से फक्कड़, मस्त, अत्यंत उदार नवीन जी राष्ट्रीय काव्यधारा के प्रमुख कवि हैं। इन्होंने 'प्रभा' और 'प्रताप' पत्रिकाओं का संपादन भी किया था। इनकी काव्य रचनाओं में 'कुंकुम', रश्मिरेखा' 'क्वासि', 'हम विषपायी जनम के' आदि प्रमुख हैं। अतीत की महिमा का गौरव-गान, तत्कालीन भारतीय समाज की रुग्ण अवस्था के प्रति व्यथा और आक्रोश एवं भविष्य के सपने इनकी कविताओं के मुख्य विषय हैं। इनकी कविताओं का एक विशिष्ट स्वर बिलकुल निजी और अनुभूति प्रधान अर्थात स्वतंत्र मन का भी है।

सुभद्रा कुमारी चौहान (1904-1948)

इनका जन्म इलाहाबाद के निहालपुर गाँव में हुआ था। अपनी शिक्षा अधूरी छोड़कर ये राजनीति में सक्रिय रहने लगीं और कई बार जेल भी गईं। इनकी कविताएँ 'त्रिधारा' और 'मुकुल' में संकलित हैं।

सुभद्रा जी की कविताएँ हिंदी समाज के बीच सर्वाधिक लोकप्रिय कविताओं में से हैं । विषय की सादगी और मार्मिकता तथा उसी के अनुरूप प्रवाहमय भाषा-शैली सुभद्रा जी की रचनाओं में देखी जा सकती है। उनकी कवितओं का एक स्वर राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम से जुड़ा है और दूसरा घर-परिवार और गृहस्थी की कोमल भावना से पूरित है । 'झाँसी की रानी', 'वीरों का कैसा हो बसंत', 'कदंब का पेड़' आदि इनकी बहुप्रसिद्ध कविताएँ है ।

गद्य साहित्य

नाटक

नाटकों की दृष्टि से यह काल 'प्रसाद युग' के नाम से अभिहित किया जा सकता है । भारतेंदु के पश्चात 'जयशंकर प्रसाद' हिंदी के दूसरे विशिष्ट नाटककार हैं । प्रसाद जी के नाटक हैं–'विशाख', 'अजातशत्रु', 'कामना', 'जन्मेजय का नागयज्ञ', 'स्कंदगुप्त', 'एक घूँट', 'चंद्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी' । इनमें स्कंदगुप्त, चंद्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

प्रसाद जी अपने नाटकों के लिए प्रायः भारतीय इतिहास के गुप्त और मौर्य काल को चुनते हैं । उनके लिए अतीत व्यतीत नहीं है, पर उनमें अतीत का अंध मोह भी नहीं है । उनकी चिंता में है – भारत का पददलित वर्तमान । इसी वर्तमान की प्रेरणा से वे अतीत की ओर मुड़े । स्वभावतः इन नाटकों की राष्ट्रीय आंदोलन और जागरण में महती भूमिका रही ।

प्रसाद जी के नाटकों में कविता एक अनिवार्य तत्त्व है । उनके नाटकों पर अनभिनेयता का आरोप लगता रहा है, इसमें सच्चाई है । पर यह भी तथ्य है कि उनके नाटकों का मंचन उनके जीवनकाल से ही होता आ रहा है ।

लक्ष्मीनारायण मिश्र (1903–1987)

ये इस काल के प्रमुख नाटककार हैं । अपने समस्या नाटकों के लिए ये प्रसिद्ध रहे हैं । 'मुक्ति का रहस्य', 'सिंदूर की होली' आदि इनके प्रसिद्ध नाटक हैं ।

हरिकृष्ण प्रेमी

प्रेमी जी भी इस काल के उल्लेखनीय नाटककार हैं । इन्होंने भी इतिहास को अपने नाटकों के लिए चुना है । इनका लक्ष्य हिंदू-मुस्लिम एकता को बल प्रदान करना था । 'शिवसाधना', 'रक्षाबंधन' आदि इनके प्रसिद्ध नाटक हैं । 'शिवसाधना' शिवाजी के जीवन पर एवं 'रक्षाबंधन' मेवाड़ की रानी कर्मावती द्वारा हुमायूँ को राखी भेजने की घटना पर आधरित है ।

रामवृक्ष बेनीपुरी के ऐतिहासिक नाटक 'विजेता', 'अंबपाली' और 'नेत्रदान' भी इस युग की प्रमुख नाट्यकृतियाँ हैं ।

उपन्यास

उपन्यास के संदर्भ में यह काल 'प्रेमचंद युग' के नाम से स्वीकारा गया है । प्रेमचंद

(1880-1936) का जन्म बनारस के पास लमही गाँव में हुआ था । प्रेमचंद यथार्थपरक जीवन-दृष्टि, समानता, सद्भाव और विराट् मानवीय मूल्यों की स्थापना करने वाले लेखकों में से हैं । वे भारतीय जीवन के गँवई चित्रों, उनकी समस्याओं, संघर्षों और प्रतिरोध की अप्रतिहत चेतना को उकेरने वाले प्रतिनिधि और महान भारतीय कथाकार हैं ।

प्रेमचंद का हिंदी में प्रकाशित पहला उपन्यास सेवासदन (1918) है । यह 'बाजारे हुस्न' के नाम से पहले उर्दू में लिखा गया था । पर इसका प्रकाशन हिंदी में पहले हुआ । प्रेमचंद के अन्य उपन्यास हैं- प्रेमाश्रम (1922), कायाकल्प (1926), रंगभूमि (1925), निर्मला (1927), गबन (1931), कर्मभूमि (1933) और गोदान (1935) । मंगलसूत्र इनका अपूर्ण उपन्यास है ।

प्रेमचंद ने उपन्यास साहित्य की पूरी परंपरा को बदल दिया । उनसे पहले तिलस्मी-ऐयारी उपन्यास ही अधिक प्रचलित थे, जो सामाजिक विषयों को छूते तो थे पर उनमें इकहरापन था । ऐसे में प्रेमचंद भारतीय जीवन, विशेषकर ग्रामीण और निम्न मध्यवर्गीय चरित्रों को अपने प्रतिनिधि पात्र बनाकर आदर्शवाद और यथार्थवाद की समन्विति से अतीत की क्रूर और मारक विसंगतियों, वर्तमान के कुरूप चेहरे तथा भविष्य की स्पष्ट संभावनाओं को उजागर कर देते हैं ।

1936 में प्रकाशित प्रेमचंद का 'गोदान' 'भारतीय किसान जीवन का महाकाव्य' कहा जाता है । 'गोदान' का पात्र होरी भारतीय किसान की महत्त्वाकांक्षाओं और विफलताओं का प्रतीक चरित्र है । गोदान सामंती व्यवस्था, जाति प्रथा, धार्मिक रूढ़ियों, अंग्रेजी सरकार की अनीतियों और इनके बीच पिसते किसानों की दारुण कथा है । परिवारों का टूटना, खेती की बदहाली, खेती की कीमत पर उद्योगों को प्रोत्साहन ऐसे कई-कई संकेत गोदान और प्रेमचंद के अन्य उपन्यासों में दर्ज हैं, जो आज हमारे समय-समाज की भयावह सच्चाइयों के रूप में प्रत्यक्ष हैं । इतना ही नहीं, भारतीय स्वतंत्रता के संघर्ष का यदि साहित्यिक साक्ष्य प्राप्त करना हो तो प्रेमचंद के उपन्यास उसका विश्वसनीय और संवेदनशील पाठ प्रस्तुत करते हुए मिलेंगे ।

यह भी उल्लेखनीय है कि प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों के माध्यम से एक ऐसी कथा-भाषा प्रदान की जो आम बोलचाल की थी । यह भाषा भारतीय, विशेषकर हिंदी समाज के यथार्थ को विश्वसनीय रूप में चित्रित करने के लिए अपरिहार्य थी ।

इस काल में प्रेमचंद के अनुकरण का बहुत जोर रहा । विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' ने 'माँ' और 'भिखारिणी', 'चतुरसेन शास्त्री ने 'हृदय की परख', 'प्रतापनारायण ने 'विदा' और 'विजय' जैसे उपन्यास लिखे । इसी युग में अपने ढंग के अकेले लेखक पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' हुए । उनके उपन्यासों में 'चंद हसीनों के खतूत' और 'दिल्ली का दलाल' जैसे उपन्यास बहुत चर्चित हुए । उन्होंने समाज की सच्चाई को बिना किसी लाग-लपेट के साथ प्रस्तुत किया । आचार्य शिवपूजन सहाय का उपन्यास 'देहाती दुनिया' भी इसी काल में प्रकाशित हुआ । कवि-नाटककार जयशंकर प्रसाद ने भी 'कंकाल', 'तितली' और 'इरावती' नामक उपन्यास लिखे । निराला ने 'अप्सरा', 'अलका', 'प्रभावती', 'निरुपमा', 'बिल्लेसुर बकरिहा', 'चतुरी चमार' आदि उपन्यास लिखे । इनके उपन्यासों में स्वच्छंदतावाद और रोमानीपन को सहज ही लक्ष्य किया जा सकता है ।

प्रेमचंद युग में ही जैनेंद्र ने 'परख', 'सुनीता', 'त्यागपत्र' जैसे कई उपन्यास लिखे । इन रचनाओं

के द्वारा उन्होंने हिंदी उपन्यास लेखन को नई दिशा देने का सफल प्रयास किया । जैनेंद्र ने व्यापक सामाजिक जीवन को अपने उपन्यासों का विषय न बनाकर व्यक्ति मन की शंकाओं, उलझनों और गुत्थियों का चित्रण किया है । वे मनोवैज्ञानिक यथार्थ के क्षेत्र में प्रवेश करने की राह सुझाते हैं । इस कारण वे हिंदी में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के पुरस्कर्ता माने जाते हैं ।

इस काल के अन्य उपन्यासकारों में भगवतीचरण वर्मा, राधिका रमण प्रसाद सिंह, सियारामशरण गुप्त, भगवती प्रसाद वाजपेयी आदि प्रमुख हैं ।

कहानी

उपन्यास की ही तरह कहानी में भी यह काल प्रेमचंद युग के नाम से ही प्रसिद्ध है । 1908 में प्रकाशित 'सोजे वतन' (उर्दू) प्रेमचंद का पहला कहानी संग्रह है । अंग्रेज सरकार ने बगावत का आरोप लगाकर इसे जब्त कर लिया गया था । इसी में संकलित 'सांसारिक प्रेम और देश प्रेम' (इश्के दुनिया और हुब्बे वतन) उनकी पहली कहानी है ।

प्रेमचंद की पहली हिंदी कहानी 'सौत' है । यह 1915 में प्रकाशित हुई थी । उन्होंने लगभग तीन सौ कहानियाँ लिखीं । उनके पास कहानी कहने की अद्‌भुत कला है । उनके विवरण और वर्णन 'सादगी का मेयार' खड़ा करते हैं । उनकी कहानियों के पात्र प्रायः समाज के अवर्ण तबके के हैं । वे इनकी जीवन स्थितियों को केंद्र में रखकर हिंदी नवजागरण और व्यापक अर्थ में भारतीय नवजागरण का अनिवार्य पाठ प्रस्तुत करते हैं । निस्संदेह प्रेमचंद भारतीय गाँव-कस्बों में रहनेवाले किसानों, मजदूरों, दलितों, पिछड़ों, शोषितों के कथाकार हैं । उनकी कहानियों में समायी विराट मानवीय संवेदना उन्हें सदैव प्रासंगिक बनाए रखेगी । वे हिंदी के सर्वाधिक एवं बार-बार पढ़े जाने वाले कथाकार हैं । उनकी कुछ कहानियों के नाम हैं - 'बड़े घर की बेटी', 'नमक का दारोगा', 'पंच परमेश्वर', 'बूढ़ी काकी', 'परीक्षा', 'सवा सेर गेहूँ', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'मंत्र', 'अलग्योझा', 'पूस की रात', 'दो बैलों की कथा', 'ठाकुर का कुआँ', 'ईदगाह, 'दूध का दाम', 'बड़े भाई साहब', 'खेल', 'नशा', 'कफन' आदि ।

प्रसाद जी इस काल के प्रमुख कहानीकार हैं । प्रेमचंद के समानांतर प्रसाद जी की कहानियाँ स्वतंत्र कथाभूमि पर खड़ी हैं । इसी कारण हिंदी कहानी में 'प्रेमचंद स्कूल' और 'प्रसाद स्कूल' की स्वतंत्र अवधारणा रही है । इनकी पहली कहानी 'ग्राम' 1911 में ही प्रकाशित हुई । प्रसाद जी की कहानियों में प्रेम और करुणा, त्याग और बलिदान, दार्शनिकता और काव्यात्मकता, भावुकता एवं चित्रात्मकता की प्रधानता है । प्रसाद जी की कहानियों के नारी पात्रों के त्याग, बलिदान और निश्छल प्रेम का पाठकों के मन पर अमिट प्रभाव पड़ता है । उनकी प्रमुख कहानियाँ हैं - 'विरामचिह्न', 'आकाशदीप', 'कला', 'देवदासी', 'आँधी', 'मधुवा', 'इंद्रजाल', 'सालवती', 'पुरस्कार' आदि ।

अन्य कथाकारों में विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक', सुदर्शन, चतुरसेन शास्त्री, पांडेय बेचनशर्मा 'उग्र' प्रमुख हैं । कौशिक जी की 'ताई' और 'पगली', सुदर्शन की 'हार की जीत', उग्र जी की 'चिनगारियाँ', 'इंद्रधनुष', 'बलात्कार', 'चॉकलेट', 'उसकी माँ', 'फाँसी' आदि चर्चित कहानियाँ रही हैं ।

जैनेंद्र ने प्रेमचंद के समय में ही हिंदी कहानी को नई पहचान देने में सफलता प्राप्त की । उनकी कहानियों में 'मनोवैज्ञानिक सत्य' को पकड़ने की कोशिश है। जैनेंद्र की कहानियों का मुख्य विषय मुक्ति के लिए छटपटाती हुई नारी है । उन्होंने कहानियों में संकेतों से बहुत कुछ कहने का काम किया है । वे गहन एवं तीव्र अनुभूतियों के कथाकार हैं । 'खेल', 'अपना अपना भाग्य', 'नीलम देश की राजकन्या', 'ध्रुव यात्रा', 'पाजेब', 'जाह्नवी' आदि उनकी बहुचर्चित कहानियाँ हैं ।

हिंदी कहानी के विकास में अज्ञेय का विशिष्ट स्थान है । अज्ञेय की कहानियों के पात्र अद्वितीय हैं । वे सिर्फ अंत:जगत के संघर्षों में उलझने वाले नहीं हैं, उनकी एक सक्रिय सामाजिक भूमिका भी है। जैनेंद्र की ही तरह अज्ञेय ने हिंदी कथाभाषा और समग्र रूप से हिंदी गद्य को नया संस्कार प्रदान किया। अनुभूति के साथ-साथ चलती हुई और उसे मूर्त करती हुई कथाभाषा के दर्शन अज्ञेय के यहाँ होते हैं । 'कड़ियाँ', 'मैना', 'सिगनेलर', 'रेल की सीटी', 'रोज', 'हरसिंगार', 'पटार का धीरज', 'हीली बोन की बत्तखें', 'शरणदाता' आदि उनकी चर्चित कहानियाँ हैं ।

इसी काल में भगवतीचरण वर्मा, भगवती प्रसाद वाजपेयी, राधिकारमण प्रसाद सिंह, सुभद्राकुमारी चौहान आदि कहानी लेखन में सक्रिय थे । सुभद्रा जी की प्रसिद्ध कहानी 'पापी पेट' इसी समय प्रकाशित हुई थी । 'बिखरे मोती' और 'उन्मादिनी' उनके कहानी संग्रह हैं ।

आलोचना

1920 में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के 'सरस्वती' से मुक्त होने के साथ हिंदी आलोचना में एक युग की समाप्ति होती है । हिंदी आलोचना का अगला युग शुक्ल युग के नाम से जाना जाता है । बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक से हिंदी आलोचना में आए परिवर्तनों को लक्ष्य करते हुए स्वयं आचार्य शुक्ल ने लिखा है, "इस तृतीय उत्थान में समालोचना का आदर्श भी बदला । गुण-दोष को कथन से आगे बढ़कर कवियों की विशेषताओं और अंत:प्रवृत्ति की छानबीन की ओर भी ध्यान दिया गया ।" केवल गुण-दोष कथन से युगीन आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होने वाली थी । ऐसे में स्वयं आचार्य शुक्ल ने 'परंपरागत आलोचना शैलियों के प्रति रुझान का भाव रखकर भी अपने युग की आवश्यकताओं को पहचाना और उनके अनुरूप सही अर्थों में हिंदी की अपनी आलोचना शैली को जन्म दिया' ।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल (1884-1941)

उनका जन्म उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के अगोना गाँव में हुआ था । 'चिंतामणि', 'रसमीमांसा', 'हिंदी साहित्य का इतिहास', 'गोस्वामी तुलसीदास', 'सूरदास' आदि उनकी पुस्तकें हैं । इसके अतिरिक्त 'जायसी ग्रंथावली', 'तुलसी ग्रंथावली' की भूमिकाएँ भी लिखीं ।

शुक्ल जी की हिंदी आलोचना को पहली देन है – साहित्यिक रुचि में परिवर्तन । स्मरणीय है कि शुक्ल जी ने रीतिकालीन साहित्य और रीतिवादी ग्रंथों को पीछे करते हुए भक्तिकालीन साहित्य को सामने लाया था । तुलसी उनके प्रिय कवि हैं क्योंकि उनमें लोकमंगल की भावना है । वे जायसी को प्रतिष्ठित करते हैं, और 'नागमती' के विरह वर्णन को हिंदी साहित्य की अद्वितीय वस्तु घोषित करते हैं । वे काव्य में कल्पना से अधिक महत्त्व अनुभूति को देते हैं । कविता में वे योग, ध्यान आदि का कोई स्थान नहीं

स्वीकारते । इसी से वे कबीर के रहस्यवाद का विरोध करते हैं और छायावाद के रहस्यवाद का भी । उन्हें प्रबंधकाव्य अधिक प्रिय हैं क्योंकि प्रबंध में रचनाकार को मार्मिक स्थलों की रचना करने का अवसर मिल जाता है और लोक मंगल की साधना का भी ।

शुक्ल जी ने आलोचना के केंद्र में भक्तिकालीन कवियों को प्रतिस्थापित किया और इसी के साथ भारतीय रसवाद की भी पुनःप्रतिष्ठा की । वे हिंदी आलोचना को सृजनात्मक साहित्य के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं ।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल का महत्त्व बताते हुए रामविलास शर्मा ने लिखा है, ''हिंदी साहित्य में शुक्ल जी का वही महत्त्व है जो उपन्यासकार प्रेमचंद या कवि निराला का । उन्होंने आलोचना के माध्यम से उसा सामंती संस्कृति का विरोध किया जिसका उपन्यास और कविता के माध्यम से प्रेमचंद और निराला ने ।'

शुक्ल जी की आलोचना-भाषा से गुजरना हिंदी गद्य की शक्ति-सामर्थ्य से परिचित होना है । उनकी भाषा बोलती है, हृदय में गहरे उतरती है और मौका पाकर व्यंग्य के तीखे तीर भी चला देती है ।

श्याम सुंदर दास भी इस काल के प्रमुख आलोचक हैं । शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उन्होंने अकादमिक आलोचना की शुरुआत की । 'साहित्यालोचन', 'भाषा विज्ञान', 'हिंदी भाषा और साहित्य' उनकी पुस्तकें हैं । उन्होंने नागरी-प्रचारिणी सभा और काशी विश्वविद्यालय के माध्यम से हिंदी साहित्य के अध्ययन-अध्यापन का गंभीर वातावरण तैयार किया ।

शांतिप्रिय द्विवेदी छायावाद के एक सहृदय आलोचक हैं । उन्होंने छायावादी काव्य के विकास के मूल में गाँधीवाद और प्रथम विश्वयुद्ध के बाद की परिस्थितियों को जवाबदेह बताया । शांतिप्रिय द्विवेदी के प्रिय कवि सुमित्रानंदन पंत हैं । इनकी आलोचना प्रभाववादी शैली की है ।

आचार्य नंद दुलारे वाजपेयी छायावाद के समर्थ आलोचक हैं । 'छायावाद' पर जब पुराने काव्य बोध वाले आलोचक चौतरफा प्रहार कर रहे थे तब वाजपेयी जी ने उसके पक्ष में सजग बौद्धिकता और तर्क-कौशल से सहानुभूति पूर्ण अभियान चलाया था । उन्होंने छायावाद की सामाजिक संदर्भों में व्याख्या की और कला और सौंदर्य बोध के निष्कर्ष पर छायावादी कवियों के मूल्यांकन किए । वे रचनाओं में सौष्ठव को बहुत महत्त्व देते थे ।

डॉ० नगेंद्र ने भी इन्हीं दिनों भारतीय काव्यशास्त्र और पश्चिमी आलोचना के संगतिपूर्ण समन्वित विवेक के साथ छायावाद के पक्ष में आलोचना लिखनी शुरू की । उनकी महत्त्वपूर्ण प्रारंभिक आलोचना पुस्तक सुमित्रानंदन पंत इन्हीं दिनों प्रकाशित हुई थी, जिसमें पंत और छायावाद के काव्यमूल्य का प्रभावशाली उद्घाटन हुआ ।

छायावाद के कवियों प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी ने भी हिंदी आलोचना को समृद्ध किया है । पंत के 'पल्लव' और निराला के 'परिमल' की भूमिका हिंदी आलोचना की अनूठी उपलब्धि है । इसी तरह जयशंकर प्रसाद ने भी पूरे मनोयोग और गंभीरता से छायावाद को भारतीय चिंतन-परंपरा के विकास की स्वाभाविक परिणति के रूप में परिभाषित किया । 'काव्य और कला तथा अन्य निबंध' में उनकी साहित्यिक मान्यताएँ संगृहीत हैं ।

निबंध

आचार्य शुक्ल इस काल के सबसे बड़े निबंधकार हैं । शुक्ल जी के निबंध प्रायः तीन प्रकार के मिलते हैं – मनोविकार विषयक, साहित्य-सिद्धांत विषयक और साहित्यालोचन विषयक । इनमें साहित्य सिद्धांत और साहित्यालोचन विषयक निबंधों का संबंध प्रत्यक्ष रूप से 'आलोचना' से है । शुक्ल जी के मनोविकार संबंधी निबंधों में उनके विशद पांडित्य, प्रौढ़ चिंतन, सहृदयता, सूक्ष्म विश्लेषण आदि का संपुंजन है । उन्होंने श्रद्धा, भक्ति, लज्जा, करुणा, लोभ, प्रीति आदि भावों पर निबंध लिखे । ये निबंध उनके साहित्य चिंतन की पुष्ट आधार भूमि हैं । इस दृष्टि से ये निबंध भी उनकी आलोचना से ही परोक्षतः जुड़े हुए हैं। इन निबंधों में मनोविज्ञान का गूढ़ विश्लेषण शास्त्रीय न होकर मार्मिक और तलस्पर्शी है । वे अपनी बात रखने के लिए साक्षात जीवन से उदाहरण चुनते हैं । 'लज्जा' और 'ग्लानि' का अंतर समझाने के लिए वे लिखते हैं, "हम अपना मुँह न दिखा कर लज्जा से बच सकते हैं, ग्लानि से नहीं । कोठरी में बंद चारपाई पर पड़े-पड़े लिहाफ के नीचे भी लोग ग्लानि से गल सकते हैं । चित्रकूट में राम-भरत के मिलाप के अवसर पर जब जनक के आने का समाचार पहुँचा तब 'सुनत जनक-आगमन बस हरखेउ अवध समाज ।' पर कैकेयी के संदर्भ में 'गरह गलानि कुटिल कैकेयी ।" स्पष्ट है कि शुक्ल जी अपनी बात समझाने के लिए सटीक उदाहरण चुनते हैं ।

शुक्ल जी के निबंधों की भाषा प्रांजल है । उसमें जीवनधर्मी तत्वों की बहुलता है । उनके निबंधों में ललित निबंधों सी आत्मीयता भी है । सबसे बड़ी बात शुक्ल जी 'अनिश्चय' में कहीं नहीं छोड़ते ।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों की अपनी छटा है । 'अशोक के फूल', 'कल्पलता', 'कुटज' आदि इनके प्रमुख निबंध संग्रह हैं । इन निबंधों में व्यक्त भारतीय लोकजीवन एवं संस्कृति की प्राणधारा और मानवतावादी जीवन दृष्टि पाठकों के मन पर गहरी छाप छोड़ती है । इनकी कई बातें हमारे सोच-विचार में रच-बस जाती हैं ।

गुलाब राय इस काल के प्रमुख निबंधकार रहे हैं । 'कलुआ क्लब', 'फिर निराश क्यों', 'मेरी असफलताएँ' आदि संग्रहों में उनके श्रेष्ठ ललित निबंध संकलित हैं ।

पदुमलाल पन्नालाल बख्शी, शिवपूजन सहाय, रघुवीर सिंह आदि इस काल के अन्य प्रमुख निबंधकार हैं ।

गद्य साहित्य की अन्य विधाएँ :

जीवनी, यात्रावृत्त, संस्मरण और पत्रलेखन की परंपरा हिंदी में पहले से थी; अब आत्मकथा, रेखाचित्र, गद्यकाव्य आदि का भी आरंभ हुआ । जीवनियाँ महात्मा गाँधी को केंद्र में रखकर सबसे अधिक लिखी गईं । इनके अतिरिक्त लाला लाजपत राय और लोकमान्य तिलक की भी जीवनियाँ लिखी गईं । गाँधी की 'आत्मकथा' और सुभाषचंद्र बोस की 'तरुण के स्वप्न' का हिंदी अनुवाद बहुत चर्चित रहा । यात्रावृत्त लेखन में राहुल सांकृत्यायन का स्थान अप्रतिम है । 'तिब्बत में सवा वर्ष', 'मेरी यूरोप यात्रा', 'मेरी तिब्बत यात्रा' आदि उनकी प्रमुख पुस्तकें हैं । 'मेरी जीवन यात्रा' उनकी आत्मकथा है ।

इस काल में संस्मरणात्मक रेखाचित्रों का भी प्रचलन हुआ । श्रीराम शर्मा, बनारसीदास चतुर्वेदी और

महादेवी वर्मा का इस दिशा में उल्लेखनीय योगदान है । महादेवी जी के रेखाचित्रों – 'रामा', 'बिंदा', 'सबिया', 'बिट्टो', 'घीसा', 'सोना', 'गिल्लू' आदि में नर और नरेतर जगत दोनों समाहित हैं । गद्य की सर्जनात्मक शक्ति के ये जीवंत एवं मार्मिक प्रमाण हैं । महादेवी के रेखाचित्रों के पात्र समाज के अवर्ण और पिछड़े तबके के हैं; अपने रेखाचित्रों में इन व्यक्ति चरित्रों की प्रतिष्ठा कर उन्होंने साहित्य की जनतांत्रिक पहचान को और मजबूत किया ।

रामवृक्ष बेनीपुरी इस काल के अनूठे शब्दचित्रकार हैं । 'लालतारा', 'माटी की मूरतें', 'गेहूँ और गुलाब' उनके शब्दचित्रों के प्रमुख संकलन हैं । छोटे-छोटे वाक्यों में 'खंजन सी फुदकती शैली' उनके लेखन की अपनी पहचान है । मर्म को छू लेने वाली भाव-व्यंजना के साथ विचारोत्तेजना उनके शब्दचित्रों की विशेषता है ।

इस युग की प्रमुख पत्र-पत्रिकाएँ

1.	आज	1920	बनारस
2.	चाँद	1920	प्रयाग
3.	माधुरी	1922	लखनऊ
4.	समन्वय	1922	कलकत्ता
5.	मतवाला	1923	कलकत्ता
6.	सुधा		लखनऊ
7.	कल्याण	1925	गोरखपुर
8.	विशाल भारत	1928	कलकत्ता
9.	हंस	1930	बनारस
10.	जागरण		बनारस
11.	देश	1920	पटना
12.	कर्मवीर		जबलपुर
13.	हिंदी नवजीवन	1921	अहमदाबाद
14.	दैनिक विश्वामित्र	1916	

छायावादोत्तर काल

1936 के आस-पास हिंदी साहित्य में विशिष्ट परिवर्तन दिखने लगते हैं । भारतीय ज्ञान-विज्ञान, अस्मिता, स्वाभिमान, मुक्ति एवं स्वराष्ट्र आदि विषयों से पहले ही परिचित हो चुके थे । इस काल में यह परिचय और अधिक गहराता है । इस काल में स्वतंत्रता के लिए आवाज अधिक स्पष्ट सुनाई पड़ने लगती है । निश्चित रूप से यह विश्वास उनमें पहले न था । गाँधी से लेकर भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद और सुभाष बाबू की भावधारा, विचार प्रवाह और प्रेरणापूर्ण स्मृति की इसमें मुख्य भूमिका थी । तद्युगीन हिंदी

साहित्य जिसे 'छायावादोत्तर काल' के नाम से जाना जाता है, इन विशिष्टताओं एवं उपलब्धियों का मुखर प्रमाण है ।

काव्य

मोटे तौर पर छायावादोत्तर काल का विस्तार 1950 तक मानना चाहिए । कविता की अनेक प्रवृत्तियाँ इस काल में दिखाई पड़ती हैं । प्रमुख प्रवृत्तियों में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक कविताएँ, उत्तर छायावादी कविताएँ, प्रगतिवादी और प्रयोगवादी काव्यधाराएँ आती हैं ।

प्रगतिशील काव्य

प्रगतिशील कविता समाज की रूढ़ियों, भेदभाव, पिछड़ेपन एवं तमाम विसंगतियों से मुक्ति का आह्वान करती है । छायावाद काल में ही निराला, पंत आदि कवि इसका आह्वान कर चुके थे । यहाँ निराला का उल्लेख विशेष रूप में करना चाहिए । विद्रोह की सामर्थ्य और लोकोन्मुखता के स्वर उनमें पहले से ही थे । कालक्रम में छायावाद की रूढ़ होती प्रवृत्तियों को भी उन्होंने तोड़ा और कविता को नवीन संस्कार दिए । उनकी दृष्टि आरंभ से ही प्रगतिशील थी । 'कुकुरमुत्ता', 'नए पत्ते' संग्रह की कविताओं में उन्होंने कविता को भाव और भाषा – दोनों स्तरों पर लोकजीवन के अधिक निकट ला खड़ा किया ।

पंत ने भी अपने संग्रह 'युगांत' (1936) से एक तरह से छायावाद के युगांत की घोषणा कर दी । वे 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' में मार्क्सवादी जीवनदृष्टि और विचारधारा के प्रति अपनी अभिरुचि का परिचय देते हैं ।

1936 में भारत में सज्जाद जहीर और मुल्कराज आनंद के प्रयासों से 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना हुई । वैश्विक स्तर पर वामपंथ का उदय और रूस में स्थापित समाजवाद आकर्षण का बड़ा कारण था । प्रलेस (प्रगतिशील लेखक संघ) का पहला अधिवेशन लखनऊ में प्रेमचंद की अध्यक्षता में संपन्न हुआ ।

प्रगतिवाद के मूल में 'मार्क्सवाद' है । प्रगतिवादी दृष्टि ने साहित्य के स्वरूप और इसके उद्देश्यों पर प्रश्न उठाए और बताया कि साहित्य को सोद्देश्य होना चाहिए । मार्क्सवाद वर्ग-संघर्ष को अनिवार्य मानता है और द्वंद्वात्मक भौतिकवाद की बात कहता है, इसी के अनुरूप प्रगतिवादी साहित्य में श्रमशील जनता को महत्त्व प्राप्त होता है । पतनोन्मुख एवं जड़ मूल्यों के लिए इस साहित्य में कोई स्थान नहीं स्वीकारा गया । 1936 के लखनऊ अधिवेशन में प्रेमचंद ने कहा था, "साहित्यकार का लक्ष्य केवल महफिल सजाना और मनोरंजन का सामान जुटाना नहीं है ।" उनके अनुसार "हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा जिसमें उच्च चिंतन हो, स्वाधीनता का भाव हो, सौंदर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो, जीवन की सच्चाइयों का प्रकाश हो – जो हममें गति, संघर्ष और बेचैनी पैदा करे, सुलाए नहीं क्योंकि अब और ज्यादा सोना मृत्यु का लक्षण है ।"

प्रगतिशील साहित्य में जनता, उसका संघर्ष और जीवन-स्थितियाँ केंद्र में हैं पर वह नारेबाजी का साहित्य नहीं है । केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन, त्रिलोचन, नरेंद्र शर्मा, शील, रामविलास शर्मा, शिवमंगल सिंह

सुमन आदि प्रमुख प्रगतिवादी कवि हैं ।

प्रगतिवादी कवियों ने आजादी की लड़ाई को सामाजिक परिवर्तन के संघर्ष के साथ जोड़ने पर बल दिया । सामाजिक संरचना में परिवर्तन के बिना राजनीतिक स्वतंत्रता का कोई अर्थ नहीं है । यह उनका स्पष्ट मत था । सामाजिक यथार्थ पर उनकी बड़ी पैनी नजर थी । उनकी कविताओं में शोषक सत्ता का विरोध और श्रम की प्रतिष्ठा हुई है । केदारनाथ अग्रवाल की पंक्तियाँ हैं –

तेज धार-सा कर्मठ पानी
चट्टानों के ऊपर चढ़कर
मार रहा है घूँसे कसकर
तोड़ रहा है तट चट्टानी

प्रगतिवादी कवियों ने सामाजिक-आर्थिक विषमता पर चोट की । उनके स्वरों में हकलाहट नहीं, व्यंग्य की धार है ।

प्रगतिवादी कविताओं की एक उल्लेखनीय विशेषता इनका प्रकृति चित्रण है । प्रकृति की यहाँ स्वतंत्र सत्ता है, वह जीवंत है । 'बसंती हवा' कविता इसका सुंदर उदाहरण है । कभी-कभी तो प्रकृति जीवन के राग-रंग, सगे-संबंधियों से अभिन्न हो जाती है, जैसे

धूप चमकती है चाँदी की साड़ी पहने
मैके में आई बेटी की तरह मगन है
फूली सरसों की छाती से लिपट गई है
जैसे दो हमजोली सखियाँ गले मिली हैं
मैया की बाहों से छूटी भौजाई सी
लहँगे की लहराती लचती हवा चली है ।

नामवर सिंह के अनुसार "बहुत सजाव-सिंगार और पेचीदगी प्रगतिशील कविता में नहीं मिलती । अपनी बात को कितना सुलझाकर उसे कितने सहज ढंग से कह दिया जाए – यही प्रगतिशील कवि का प्रयत्न रहता है । उसके भावों की तरह भाषा भी गाँठरहित होती है ।" प्रगतिशील कवियों के लिए शिल्प प्राथमिक नहीं है लेकिन वे इसकी उपेक्षा भी नहीं करते । छायावादी काव्यभाषा को वे बहुत शीघ्रता से आम बोल-चाल की जमीन पर उतार लेते हैं । उनकी काव्यभाषा प्रतीकों से भरी है । उन्हें तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशज किसी से भी परहेज नहीं रहता । इसी से संप्रेषणीयता का संकट भी उनके सामने नहीं है ।

प्रमुख कवि

केदारनाथ अग्रवाल (1911-2000)

इनका जन्म उत्तर प्रदेश के बाँदा में हुआ था । ये श्रम और सौंदर्य के कवि हैं । इनके कई कविताएँ जीवन और प्रकृति के अत्यंत उल्लासमय चित्रों से भरी हैं । यह सही है कि उनकी कुछ कविताएँ उद्बोधनात्मक हैं पर मूलत: वे राग के कवि हैं । इनके प्रमुख संग्रह हैं – 'युग की गंगा', 'नींद के बादल', 'फूल नहीं रंग बोलते हैं' आदि ।

केदारनाथ अग्रवाल में नाटकीयता से मुक्त गृहस्थ प्रेम और संयोग के दृश्य हैं, घर-आँगन, खेत-खलिहान की बात है । इनकी कविताओं का सौंदर्य प्रकृति और लोकजीवन के तत्वों से निर्मित है।

नागार्जुन (1911-1998)

इनका जन्म बिहार के दरभंगा जिले के तरौनी गाँव में हुआ था । नागार्जुन के प्रमुख संग्रह हैं – 'युगधारा', 'सतरंगे पंखोंवाली', 'प्यासी पथराई आँखें', 'चंदना', 'खिचड़ी विप्लव देखा हमने', 'तुमने कहा था', 'हजार-हजार बाँहों वाली' आदि ।

नागार्जुन को 'आधुनिक कबीर' कहा गया है । वे एक प्रतिबद्ध कवि हैं । उनके पास विचार है, संवेदना है और उसे कविता का रूप देने वाली लोकधर्मी कला भी । वे जनकवि हैं । उनकी बीहड़ कल्पना, सदैव जाग्रत आँखें, गँवई अंदाज, हाशिए पर पड़ी हुई जीवन स्थितियों को कविता बना देने में माहिर है । व्यवस्था के प्रति स्थाई असंतोष और विरोध की स्पष्ट आवाज नागार्जुन की कविताओं की है। नागार्जुन की प्रकृति विषयक कविताओं में अद्भुत आकर्षण है । उनकी कविताओं का प्रकृति का विस्तार, पर्वत, समुद्र से लेकर मैदानी इलाकों तक है । 'बादल को घिरते देखा है', 'दंतुरित मुस्कान', 'सिंदूर तिलकित भाल', 'गुलाबी चूड़ियाँ', 'हरिजन गाथा', 'अकाल और उसके बाद', 'दुखहरण मास्टर' आदि नागार्जुन की बहुपठित एवं बहुचर्चित कविताएँ हैं ।

त्रिलोचन (1917-2007)

त्रिलोचन हिंदी के सर्वाधिक सीधे-सादे पर अत्यंत विलक्षण कवि हैं । भाषा की अथाह शक्ति का संबल उनके पास है । हिंदी में वे अपने सॉनेटों के लिए विशेष चर्चित रहे हैं । त्रिलोचन की कविताओं में जीवन के भावों-अभावों का गहरे मानवीय संस्पर्श के साथ अंकन हैं । 'धरती', 'दिगंत', 'ताप के तापे हुए दिन', 'शब्द' आदि उनके संग्रह हैं । त्रिलोचन के संबंध में मलयज का कथन है, "वे मानव अनुभूतियों की विशिष्टता के नहीं, मानव अनुभूतियों की मार्मिकता के कवि हैं । वे अनुभूति की जटिलता को नहीं उसकी संपन्नता को पकड़ते हैं और अपनी कला में साधते हैं । वे मानव मर्म के किसी नए स्तर का उद्घाटन नहीं करते, वरन् जीवन-जगत की आपाधापी में जो सहज मानव-सत्य आँख की ओट हो गए हैं, उन्हें एक नई और विश्वसनीय पहचान के साथ हमारे सामने लाते हैं ।"

राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविता

राष्ट्रीयता एक मूल्य है, प्रेरणा है । इसने हिंदी के कवियों को उत्प्रेरित किया है । मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सुभद्रा कुमारी चौहान आदि का उल्लेख पूर्व में हो चुका है। स्वाधीनता के संघर्ष को आगे बढ़ाने में इन कवियों की रचनाओं का अपना ही महत्त्व है । पराधीनता से मुक्ति, प्राचीन संस्कृति की रक्षा, नए एवं आधुनिक मूल्यों का स्वीकार, समता पर आधारित समाज की स्थापना एवं रूढ़ियों से मुक्ति की छटपटाहट इस काल की रचनाओं में दिखाई पड़ती है । रामधारी सिंह दिनकर, सोहन लाल द्विवेदी, श्याम नारायण पांडेय आदि इस काव्यधारा के प्रमुख कवि हैं ।

रामधारी सिंह दिनकर (1908-1974)

दिनकर का जन्म बिहार के बेगूसराय जिले (पहले मुंगेर) के 'सिमरिया' गाँव में हुआ था । दिनकर की कविता का फलक अत्यंत ही विस्तृत है । उनमें अपने परिवेश से जुड़ने की बेचैनी है । विचार और संवेदना का सुंदर समन्वय उनकी कविताओं में है । 'रेणुका', 'हुंकार', 'रसवंती', 'नीलकुसुम', 'कुरुक्षेत्र', 'रश्मिरथी', 'उर्वशी' आदि उनकी काव्य रचनाएँ हैं ।

दिनकर अपनी कविताओं में सामाजिक विषमता पर प्रहार करते हैं । उनकी प्रगतिशीलता एक ऐसी सामाजिक चेतना का परिणाम है, जो मूलतः भारतीय है और राष्ट्रीय भावना से परिचालित है ।

उत्तरछायावादी कविताएँ

छायावादी कवियों का प्रभाव अपने समकालीनों और परवर्ती रचनाकारों पर अमिट रूप में पड़ा है। इसका अर्थ यह नहीं है कि परवर्ती रचनाकारों में मौलिकता नहीं है । प्रसाद, निराला, पंत के समय में ही रामकुमार वर्मा, मोहनलाल महतो वियोगी, जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज' जैसे रचनाकार सक्रिय थे । आगे चलकर जानकी वल्लभ शास्त्री इस परंपरा की प्रमुख कड़ी के रूप में उभरे । शास्त्री जी की काव्य कृतियों में प्रमुख हैं – 'रूप-अरूप', 'शिप्रा', 'मेघगीत', 'अवंतिका' आदि ।

जानकी वल्लभ शास्त्री निराला की प्रेरणा से हिंदी में आए । उनके काव्य में छायावादी आवेग और भाषा-संस्कार देखा जा सकता है । अपनी रचना में कलागत उपादानों के साथ ही सांस्कृतिक संप्रेषण को वे बराबर महत्त्व देते हैं । विशद् अनुभव और अगाध पांडित्य ने इनकी रचना के लिए संबल का ही कार्य किया है । यह ध्यान देने की बात है उत्तर छायावाद की धारा को आगे बढ़ाने में बिहार के कवियों का विशेष योगदान है । इनमें जानकी वल्लभ शास्त्री के अतिरिक्त गोपाल सिंह नेपाली, केदारनाथ मिश्र 'प्रभात', आरसी प्रसाद सिंह, कलक्टर सिंह केसरी और राम गोपाल शर्मा 'रुद्र' के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं । इस काल में प्रबंधकाव्य रचना की दृष्टि से आचार्य नंददुलारे वाजपेयी ने बिहार की त्रयी–मोहनलाल महतो वियोगी के 'आर्यावर्त', रामधारी सिंह दिनकर के 'कुरुक्षेत्र' तथा केदारनाथ मिश्र प्रभात के 'कैकेयी' काव्यों की विशेष चर्चा की है ।

छायावादोत्तर काल में हरिवंश राय बच्चन, भगवती चरण वर्मा, नरेंद्र शर्मा, रामेश्वर शुक्ल अंचल, गोपाल सिंह नेपाली, आरसी प्रसाद सिंह जैसे कवियों ने प्रेम और मस्ती का नया काव्य लिखा । स्वच्छंदता की प्रवृत्ति पहले भी मौजूद थी पर इन कवियों में जो बेपरवाही, मस्ती, जीवन के प्रति उद्दाम आकर्षण और एक प्रकार की तटस्थता है वह पहले न थी । जीवन के अनुभवों की अकुंठ अभिव्यक्ति इनके समक्ष प्रमुख है, यह व्यक्तिवादी स्वर अराजकतावादी नहीं है । यह सभी प्रकार के बंधनों से मुक्ति, आपसदारी और प्रेम को सर्वोच्च मूल्य के रूप में स्थापित करता है । इनमें आवेग है और स्वभावतः संघर्ष की ऊर्जा भी । भगवतीचरण वर्मा की ये पंक्तियाँ इस धारा की मूल प्रवृत्ति को स्पष्ट करती हैं –

हम दीवानों की क्या हस्ती
हैं आज यहाँ कल वहाँ चले

मस्ती का आलम साथ चला
हम धूल उड़ाते जहाँ चले

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' इस धारा के भी प्रमुख रचनाकार हैं । उन्होंने 'कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ' कहकर अपने समय-समाज में आमूल परिवर्तन की इच्छा व्यक्त की है । इस धारा के कवियों ने जाति-वर्ण धर्म से परे एक ऐसे राष्ट्र और विश्व की कल्पना की है, जो प्रेम और मस्ती में मग्न हो -

हो जाने दे गर्क नशे में, मत पड़ने दे फर्क नशे में
ज्ञान ध्यान पूजा पोथी के फट जाने दे वर्क नशे में
ऐसी पिला कि विश्व हो उठे एक बार तो मतवाला
साकी अब कैसा विलंब भर-भर ला तन्मयता हाला ।

प्रमुख कवि

हरिवंश राय बच्चन

प्रेम और मस्ती की इस धारा की सर्वाधिक चर्चित कृति बच्चन की 'मधुशाला' है । इसके अतिरिक्त 'मधुबाला', 'मधुकलश', 'निशा निमंत्रण', 'एकांत संगीत', 'आकुल अंतर' आदि उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं ।

बच्चन की कविताओं में मौजूद 'हाला' को देखकर इस काव्यधारा को 'हालावाद' की संज्ञा ही दे दी गई । इसका संबंध जीवन-जगत से पलायन से भी जोड़ा गया । इन आरोपों के संबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का यह कथन उल्लेखनीय है - "वस्तुत: यह 'हाला' एक प्रतीक मात्र है जो तत्कालीन झूठी आध्यात्मिकता के प्रतिवाद का एक प्रतीक मात्र था । मूलत: बच्चन की कविता मस्ती, उमंग और उल्लास की कविता है ।"

भगवतीचरण वर्मा के 'मधुकण', 'प्रेम संगीत', 'मानव' और 'एक दिन', गोपाल सिंह नेपाली के 'पंछी', 'उमंग', 'रागिनी', 'पंचमी', 'रिमझिम', आरसी प्रसाद सिंह के 'कलापी', 'जीवन और यौवन', 'प्रेम गीत', नरेंद्र शर्मा के 'कदलीवन' आदि के गीतों ने हिंदी कविता का व्यक्तिनिष्ठ अध्याय तैयार किया । इस धारा की प्रसिद्धि का एक प्रमुख कारण इसकी संप्रेषणीयता है । सीधे-सादे शब्द और उनमें समाए संगीत और भावुकता ने हिंदी पाठकों को सहज ही आकर्षित किया ।

प्रयोगवाद

प्रत्येक काल में कविता के क्षेत्र में कुछ न कुछ प्रयोग होते ही रहे हैं तथापि हिंदी कविता के इतिहास में एक विशेष काव्यधारा को प्रयोगवादी कविता की संज्ञा दी जाती है । इसका आरंभ 1943 में अज्ञेय के संपादन में प्रकाशित 'तारसप्तक' से माना जाता है । 'तारसप्तक' में सात कवि थे - मुक्तिबोध, नेमिचंद जैन, प्रभाकर माचवे, गिरिजा कुमार माथुर, भारत भूषण अग्रवाल, रामविलास शर्मा और अज्ञेय ।

तारसप्तक की भूमिका में अज्ञेय ने प्रयोग पर बल देते हुए सभी कवियों की प्रयोगधर्मिता को

रेखांकित किया । प्रयोग के इसी आग्रह को देख कर आलोचकों ने इन कवियों की कविताओं को प्रयोगवादी कविता कहना शुरू कर दिया । इसी क्रम में प्रयोगवादी कविता को प्रगतिवाद के विरोध में भी देखा जाने लगा, जबकि तारसप्तक के कई कवि छेत्रित रूप से मार्क्सवादी थे ।

यों, बिहार के तीन रचनाकारों नलिन विलोचन शर्मा, केसरी कुमार और नरेश के नाम के आद्यक्षरों से बने शब्द 'नकेन' के नाम से प्रयोग को प्रयोगवादियों की तरह साधन मानने के बदले साध्य माननेवाला एक स्वतंत्र काव्यांदोलन ही चला जिसके अनुसार शुद्ध प्रयोगवादी ये ही थे, अज्ञेय आदि सप्तकों के कवि प्रयोगशील थे ।

प्रयोगवादी कविता आधुनिक भावबोध की कविता है । द्वितीय विश्वयुद्ध ने वैश्विक स्तर पर अनेक परिवर्तन लाए, ये परिवर्तन जितने भौतिक थे, उतने ही वैचारिक धरातल पर ऊहापोह मचाने वाले भी । युद्धोत्तर परिदृश्य में मूल्य टूटने लगते हैं, व्यक्ति के 'अस्तित्व' पर प्रश्न खड़े होते हैं । 'स्व' की चिंता यहाँ प्रमुख है । भारतभूषण अग्रवाल की पंक्तियाँ हैं –

एक दीखने वाली मेरी देह में दो 'मैं' हैं ।
मैं और एक मेरा पिट्ठू
मैं तो
खैर
मामूली सा क्लर्क हूँ पर
मेरा पिट्ठू ?
वह जीनियस है ।

प्रयोगवादी कवि ने कविता में भावुकता के लिए कोई स्थान नहीं रखा । इसमें कल्पनाशीलता के लिए भी कोई जगह नहीं है । यहाँ बौद्धिकता का आग्रह है ।

प्रयोगवादी कविता में भाषा और शिल्प के स्तर पर भी नवीनता दिखाई पड़ती है । प्रयोगवादी कवि अपनी प्रिया को 'चाँदनी चंदन सदृश' न कहकर 'बाजरे की कलगी' कहना पसंद करता है । छायावादी लाक्षणिक वक्रता से आगे बढ़कर यहाँ सांकेतिक प्रतीकों का खूब प्रयोग हुआ । छायावाद में बल परिवेश के अंकन पर था और प्रयोगवाद में संवेदना के अंकन पर । इसलिए कविता की पूरी संरचना इस धारा में बदल जाती है ।

प्रमुख कवि

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय

अज्ञेय इस दौर के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण साहित्यिक व्यक्तित्व हैं । 'प्रयोगवाद' और 'नई कविता' के पुरस्कर्ता अज्ञेय ही हैं । आरंभ में ये स्वाधीनता के क्रांतिकारी आंदोलनों से जुड़े रहे और जेल की भी यात्रा की । अज्ञेय के प्रमुख संग्रह हैं – 'भग्नदूत', 'चिंता', 'इत्यलम्', 'हरी घास पर क्षण भर', 'बावरा अहेरी', 'इंद्रधनु रौंदे हुए ये', 'अरी ओ करुणा प्रभामय', 'आँगन के पार द्वार', 'महावृक्ष के नीचे', 'कितनी नावों में कितनी बार' आदि ।

मार्क्सवादी आलोचना अज्ञेय को 'व्यक्तिवादी' कहती है जबकि अज्ञेय की चिंता में 'व्यक्तित्व' है। अज्ञेय के लिए मानवीय व्यक्तित्व की स्वाधीनता, अद्वितीयता व सर्जनात्मकता में विश्वास एक प्रमुख कवि दायित्व है। इनकी कविता में व्यक्ति और समाज के बीच अनचाहा तनाव नहीं है और न ही व्यक्ति और समाज के संबंध का सामान्यीकरण। व्यक्ति और समाज के संबंध को उन्होंने 'नदी' और 'द्वीप' के माध्यम से प्रकट किया है -

किंतु हम हैं द्वीप। हम धारा नहीं हैं
स्थिर समर्पण है हमारा। हम सदा से द्वीप हैं स्रोतस्विनी के
किंतु हम बहते नहीं हैं
क्योंकि बहना रेत होना है

'हिरोशिमा', 'साम्राज्ञी का नैवेद्य दान', 'असाध्य वीणा', 'कितनी नावों में कितनी बार' जैसी कविताओं में अज्ञेय का कलाकार मन कविता और साहित्य के लिए विराट कैनवास खड़ा करता है।

व्यापक परिप्रेक्ष्य में 'स्व' को पुनः पुनः जाँचना और समृद्ध करना यह अज्ञेय की विशेषता है। क्षणवाद और लघुमानव के प्रश्नों को अज्ञेय ने मुखरता से उठाया। क्षण के महत्त्व को स्वीकारते हुए वे वस्तुतः अनुभूति को प्राथमिकता देते हैं। अज्ञेय ने भाषा को मानवीय व्यक्तित्व और अस्मिता से अभिन्न माना है। भाषा केवल अभिव्यक्ति नहीं, पुनःसृजन है, अपने आप में एक सिद्धि है। तत्सम की सामर्थ्य और तद्भव का अभिजात्य दोनों अज्ञेय के यहाँ है। बिंबों, प्रतीकों और कभी-कभी सपाटबयानी सी दिखती उनकी काव्यभाषा हिंदी को अपरिमित वाक्शक्ति से परिचय कराती है।

नई कविता

नई कविता का ऐतिहासिक संबंध अज्ञेय द्वारा संपादित 'दूसरा सप्तक' (1951) से है। 'दूसरा सप्तक' में संकलित कवि थे - भवानी प्रसाद मिश्र, शकुंत माथुर, हरिनारायण व्यास, शमशेर बहादुर सिंह, नरेश मेहता, रघुवीर सहाय तथा धर्मवीर भारती। इसी क्रम में 'तीसरा सप्तक' (1959) का भी प्रकाशन हुआ, इसमें संकलित कवि थे - प्रयाग नारायण त्रिपाठी, कीर्ति चौधरी, मदन वात्स्यायन, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण, विजयदेव नारायण साही तथा सर्वेश्वरदयाल सक्सेना। नई कविता के महत्त्वपूर्ण कवि श्रीकांत वर्मा इन सप्तकों में नहीं थे।

नई कविता का फलक अत्यंत ही विस्तृत है। यहाँ किसी एक मतवाद का आग्रह नहीं है। गाँधीवाद, मार्क्सवाद, लोहियावाद, अस्तित्ववाद आदि कोई भी विचार सरणी नई कविता के लिए अछूती नहीं है। नई कविता ने अपने लिए कोई तंग चौहद्दी नहीं खींची।

नई कविता में जीवन के प्रति गहरी आस्था है। क्षण के महत्त्व की चर्चा प्रयोगवाद के संदर्भ में हुई है। नई कविता में उसका विस्तार है। यहाँ जीवन के प्रत्येक क्षण के उपभोग का प्रश्न नहीं है, बल्कि प्रत्येक क्षण में समाए जीवन को उसकी पूर्णता में अनुभूत एवं अभिव्यक्त करने का प्रश्न है। ऐसे में कवि की ईमानदारी बहुत बड़ा मूल्य है। झूठी सहानुभूति से बेहतर श्रीकांत वर्मा की यह स्वीकारोक्ति है -

मैं गौर से सुनता हूँ
औरों के रोने को
मगर दूसरों के दुख को
अपना मानने की बहुत
कोशिश की, नहीं हुआ ।

क्षण का महत्त्व और परंपरा की साधना, दोनों को यहाँ एकसाथ स्वीकृति मिली है । अज्ञेय की पंक्तियाँ हैं -

एक क्षण भर और :
लंबे सर्जना के क्षण कभी भी हो नहीं सकते ।
बूँद स्वाती की भले हो
बेधती है मर्म सीपी का उसी निर्मम त्वरा से
वज्र जिससे फोड़ता चट्टान को ।
भले ही फिर व्यथा के तम में
बरस पर बरस बीते
एक मुक्ता रूप को पकते ।

मोहभंग नई कविता का एक प्रमुख स्वर है । आजादी से जुड़े सपने पूरे नहीं हो सके, उम्मीदें टूटने लगीं, इसने समूची व्यवस्था से मोहभंग को जन्म दिया । मुक्तिबोध, रघुवीर सहाय, श्रीकांत वर्मा आदि की कविताएँ स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात हुए मोहभंग का विश्वसनीय साक्ष्य प्रस्तुत करती हैं ।

नई कविता की भाषा सामान्यतः बोलचाल की भाषा के नजदीक है । बिंबों से लेकर सपाटबयानी तक किसी एक फॉर्म में नया कवि नहीं बँधा ।

प्रमुख कवि

मुक्तिबोध (1917-1964)

मुक्तिबोध आधुनिक हिंदी कविता के सर्वाधिक महत्वपूर्ण कवियों में एक हैं । 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' उनकी कविताओं का संकलन है । 'अंधेरे में', [redacted], 'भूल गलती जैसी उनकी अनेक कविताएँ हैं जो आधुनिक हिंदी कविता की उपलब्धि हैं ।

मुक्तिबोध के संबंध में शमशेर ने कहा है "मुक्तिबोध की रचनाएँ वैचारिक धरातल पर इतिहास बोध से संपन्न और वर्तमान के प्रति तीखी प्रतिक्रिया से युक्त होती हैं ।"

मुक्तिबोध को वैचारिक ऊर्जा मार्क्सवाद से प्राप्त होती है । उनकी कविताओं में बेचैनी और दारुण आत्मसंघर्ष है । उनके सामने व्यवस्था और समाज की धुँधली तस्वीर नहीं है और न ही अपने लक्ष्यों के प्रति किसी किस्म का भटकाव । अपनी प्रसिद्ध कविता 'अँधेरे में' वे आजादी के बाद के भारत में व्याप्त राजनीतिक-सामाजिक मूल्यों पर सवाल खड़ा करते हैं । यह मोहभंग की स्थिति है, ऐसे में 'अँधेरे में' कविता का काव्य नायक तमाम ऊहापोहों के बाद 'बौद्धिक जुगाली' से आगे सक्रिय एवं सार्थक भूमिका

में उतरने को तैयार दिखाई पड़ता है -

अब अभिव्यक्ति के सारे खतरे
उठाने ही होंगे
तोड़ने होंगे ही मठ और गढ़ सब ।

.....

खोजता हूँ पठार... पहाड़... समुंदर
जहाँ मिल सके मुझे
मेरी वह खोई हुई
परम अभिव्यक्ति अनिवार
आत्म संभव ।

शमशेर बहादुर सिंह (1911-1993)

इनका जन्म देहरादून में हुआ था । इनकी प्रमुख कृतियाँ हैं – 'कुछ कविताएँ', 'कुछ और कविताएँ', 'चुका भी हूँ नहीं मैं', 'इतने पास अपने', 'बात बोलेगी', 'काल तुझसे होड़ है मेरी' आदि ।

शमशेर की कविता का फलक विस्तृत है, उन्होंने स्वयं कहा है, "मेरी कविता के निर्माण में आस-पास की साधारण सी वस्तु या कोई ऐसा व्यक्ति जो एकाएक मेरे कविता के पथ में आकर खड़ा हो जाता है, मैं उसको भी अपने रंग में लपेटकर अपनी कविता में शामिल कर लेता हूँ ।" उन्होंने अपनी कविता के लिए किसी फॉर्म या शैली का बंधन नहीं स्वीकारा । उनकी काव्यात्मा गहरी, सूक्ष्म और अंतर्मुखी है । वे मूलतः रोमानी कवि हैं, पर उनमें रागात्मक ऐश्वर्य नहीं बल्कि रागात्मक बेचैनी है । अकेलेपन का आतंक नहीं वैभव है -

खुश हूँ कि अकेला हूँ
कोई पास नहीं है
बजुज एक सुराही के
बजुज एक चटाई के
बजुज एक जरा से आकाश के
जो मेरा पड़ोसी है छत पर ।

वैचारिक स्तर पर शमशेर का जुड़ाव मार्क्सवाद से है । उन्होंने 'वाम वाम वाम दिशा' जैसी कविताएँ लिखी हैं पर समाजचेता कवियों की तरह उनमें मुखरता नहीं है । इसके बदले पीड़ा और तल्खी का भाव ही प्रमुख है ।

अपने शिल्प से शमशेर ने हिंदी कविता को समृद्ध किया है । दूसरा सप्तक में वे कहते हैं, "हर चीज की हर भावना की जो अपनी भाषा होती है, जिसमें वह कलाकार से बात करती है, उसको सीखूँ ।" यही उनके लिए कला है । उनके अनुसार "जीवन की सच्चाई और सौंदर्य को अपनी कला में सजीव से सजीव रूप देते जाना, इसी को मैं साधना समझता हूँ ।"

रघुवीर सहाय (1929-1990)

रघुवरी सहाय स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कविता के महत्त्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं । 'सीढ़ियों पर धूप में', 'आत्महत्या के विरुद्ध', 'हँसो, हँसो, जल्दी हँसो', 'लोग भूल गए हैं', और 'कुछ पते कुछ चिट्ठियाँ' इनके काव्य संकलन हैं ।

रघुवीर सहाय नागार्जुन और मुक्तिबोध की तरह मार्क्सवादी नहीं हैं, ये लोहिया से प्रभावित समाजवादी हैं पर अपने समय-समाज को जानने-समझने में उन्हें तनिक भी संशय या भ्रम नहीं है । हिंदी कविता के इतिहास में मुक्तिबोध से आरंभ हुआ मोहभंग रघुवीर सहाय में आकर पूर्णता प्राप्त करता है । देश की राजनीतिक व्यवस्था से तीव्र असंतुष्टि इनकी कविताओं में हैं । नेहरू युग की असफलता को ये अपनी कविताओं में बार-बार दिखलाते हैं -

बीस बरस खो गए
भरम उपदेश में
एक पूरी पीढ़ी जनमी पली पुसी क्लेश में
बेगानी हो गई अपने ही देश में

रघुवीर सहाय अपनी कविताओं में रोमीनीपन को तनिक भी जगह नहीं देते हैं । उनकी कविताओं का खुरदुरा यथार्थ उन्हें एक असंतुष्ट कवि की पहचान दिलाता है ।

केदारनाथ सिंह

इनकी काव्य यात्रा 'तीसरा सप्तक' से शुरू होती है । इनकी आरंभिक कविताएँ प्रगीतात्मक थीं । गाँव और उसकी प्रकृति से जुड़ाव और लोकगीतों वाली ताजगी इनकी आरंभिक रचनाओं में साफ देखी जा सकती है । धीरे-धीरे इनकी कविता की जमीन परिपक्व होने लगती है । इनकी कविताओं में समाज के प्रगतिशील तत्त्वों और उच्चतर मानव मूल्यों के प्रति स्पष्ट लगाव है ।

'अभी बिलकुल अभी', 'जमीन पक रही है', 'यहाँ से देखो', 'अकाल में सारस', 'बाघ', 'उत्तर कबीर और अन्य कविताएँ', 'टॉल्सताय और साइकिल' आदि इनके काव्य संग्रह हैं ।

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, कुँवर नारायण, विजयदेव नारायण साही, धर्मवीर भारती, श्रीकांत वर्मा आदि भी नई कविता के प्रमुख कवि हैं । इन्होंने रचना की अलग-अलग भूमियों पर काम करते हुए नई कविता को विस्मयजनक वैविध्य से समृद्ध किया ।

समकालीन कविता

नई कविता की रूढ़ियाँ समय के साथ स्पष्ट होने लगीं । नई पीढ़ी के कवियों ने व्यवस्था के प्रति अपना आक्रोश अपने-अपने ढंग से दिखाया । धूमिल और राजकमल चौधरी का नाम इस दृष्टि से विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

राजकमल चौधरी के यहाँ क्रोध और आक्रोश उचित दिशा न पाकर भटक जाता है । राजकमल चौधरी, जगदीश चतुर्वेदी, श्याम परमार की कविता को 'अकविता' कहा गया । इनकी कविताओं में 'वर्जित

शब्दों' का खुलकर प्रयोग हुआ ।

धूमिल इस काल के अत्यंत प्रखर और महत्त्वपूर्ण कवि हैं । व्यवस्था के प्रति गुस्सा और संदेह उनका स्थाई भाव है । रघुवीर सहाय व्यवस्था पर जहाँ व्यंग्य करके छोड़ देते हैं धूमिल अपनी कविताओं में उसी व्यवस्था पर अपना आक्रोश प्रकट करते हैं । 'संसद से सड़क तक' इनकी कविताओं का संकलन है । 'बीस साल बाद', 'मोची राम', 'पटकथा' जैसी कविताओं में उनके सामयिक यथार्थ को देखा जा सकता है -

क्या आजादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है
जिन्हें एक पहिया ढोता है

देश में आपातकाल और उसके आस-पास नागार्जुन और भवानी प्रसाद मिश्र जैसे कवि फिर से लोकप्रिय हुए । नागार्जुन के तीखे व्यंग्य और भवानी प्रसाद मिश्र की रचना 'गीत फरोश' इस काल में अत्यंत लोकप्रिय सिद्ध हुई ।

1980 के आस-पास हिंदी में नए कवियों की एक पूरी खेप आई । अरुण कमल, उदय प्रकाश, ज्ञानेंद्रपति, राजेश जोशी, मंगलेश डबराल, वेणु गोपाल, आलोक धन्वा, वीरेन डंगवाल आदि के जरिए हिंदी कविता नई यात्रा पर बढ़ी ।

बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में पूरे भारतीय समाज पर वैश्विक पूँजी और तकनीक का दबाव तेजी से बढ़ता हुआ महसूस किया जा रहा है । स्वभावतः यह दबाव कविता पर भी है । पर इस वर्चस्ववाद के विरुद्ध होना कविता की प्रकृति में ही निहित है । हिंदी कविता ने ऐसे माहौल में अपनी जनपक्षीय पहचान को और अधिक मजबूत किया है । अरुण कमल के शब्दों में, "कविता निर्बलतम का पक्ष है । जिसका कोई नहीं उसकी कविता है ।"

आज कविता हमसे हमारे होने का मूल्य खोजती है । सरपट भागती यह दुनिया ऐसे किसी मूल्य के लिए रुकना तो दूर सोचने के लिए भी तैयार नहीं है । यह संतोष का विषय है कि हिंदी कविता में यह बेचैनी, मानव-संबंधों, प्रकृति, पर्यावरण के प्रति संवेदना बची हुई है । यह प्रश्न व्यक्ति मात्र के चरित्र से होकर मनुष्य के समग्र सामुदायिक अस्तित्व से जुड़ा है । घृणा, हिंसा और भय के नए संसार में कवि ने प्रतिपक्ष की भूमिका निभाते हुए अपनी सार्थक भूमिका निभाई है ।

समकालीन कविता में दलित कविता, आदिवासी कविता जैसे कई आंदोलन चल रहे हैं । वर्तमान में हिंदी में कुँवर नारायण, केदारनाथ सिंह, विनोद कुमार शुक्ल, विष्णु नागर, भगवत रावत, ज्जिेंद्र, ऋतुराज, अरुण कमल, राजेश जोशी, ज्ञानेंद्रपति, देवीप्रसाद मिश्र, चंद्रकांत देवताले, लीलाधर जगूड़ी, मंगलेश डबराल, वीरेन डंगवाल, आलोक धन्वा आदि वरिष्ठ कवियों के साथ-साथ एकदम नए कवियों की अनेक पीढ़ियाँ सक्रिय हैं ।

छायावादोत्तर गद्य

खड़ी बोली गद्य का इतिहास बहुत पुराना नहीं है और आरंभ के तीन-चार दशकों में ही इसने यथेष्ट प्रगति कर ली । यों गद्य और कविता में विरोध का संबंध नहीं है, हिंदी के श्रेष्ठ रचनाकारों ने अपने

रचनाकर्म से इसे प्रमाणित किया है । कविता में दिखनेवाले प्रगतिवादी-प्रयोगवादी तत्त्व गद्य की विभिन्न विधाओं में भी आसानी से दिख जाते हैं ।

नाटक

हिंदी में नाट्य साहित्य और रंगमंच के संबंध पर प्रसाद के समय अनिर्णय की स्थिति थी । प्रसाद के नाटकों में रंगमंचीय गुण से अधिक प्रमुख विषय था । छायावादोत्तर काल में हिंदी नाटकों को आधुनिक भाव-बोध से जोड़ने का पहला प्रयास उपेंद्रनाथ अश्क करते हैं । 'छठा बेटा' और 'अंजो दीदी' उनकी प्रमुख नाट्य कृतियाँ हैं ।

जगदीशचंद्र माथुर का 'कोणार्क' भी एक प्रसिद्ध नाट्यकृति है । सर्जना और विध्वंस, नई पीढ़ी-पुरानी पीढ़ी और राजसत्ता तथा जनसत्ता का द्वंद्व इस नाटक में है ।

धर्मवीर भारती का 'अंधा युग' एक गीतिनाट्य है । युद्धों की छाया में जी रहे विश्व को यह नाटक एक संदेश देता है । धर्मवीर भारती ने इस कृति में महाभारत की हिंसा-प्रतिहिंसा, अंधापन, घृणा, बर्बरता, पराजय, कुंठा, अनास्था एवं संशय और कृष्ण की मृत्यु के पश्चात गहराते अँधियारे के बीच से आस्था के बीज रूप की खोज की है । धर्मवीर भारती महाभारत को समकालीन संदर्भों में देखने का प्रयास करते हैं। अपनी टिप्पणियों से यह रचना आधी सदी बाद भी उतनी ही प्रासंगिक है -

सत्ता उनकी होगी / जिनकी पूँजी होगी ।

जिनके नकली चेहरे होंगे / केवल उन्हें महत्त्व मिलेगा ।

मोहन राकेश इस युग के समर्थ एवं प्रमुख नाटककार हैं । 'आषाढ़ का एक दिन', 'लहरों के राजहंस' और 'आधे-अधूरे' उनकी नाट्य कृतियाँ हैं । 'आषाढ़ का एक दिन' संस्कृत के महान कवि-नाटककार कालिदास के जीवन पर आधारित है । राजसत्ता किस प्रकार किसी रचनाकार-कलाकार या व्यक्ति की स्वतंत्रता और सर्जनात्मकता सोख लेती है, यह इस नाटक में दिखाया गया है । लेखकीय प्रतिबद्धता और राजसत्ता के द्वंद्व में कालिदास की प्रेमिका मल्लिका एक उदास कविता की तरह लगातार सुनाई पड़ती रहती है । मोहन राकेश की अन्य नाट्य कृतियों में भी कथ्यगत तनाव इसी रूप में आधुनिक ही है । मोहन राकेश ने अपनी नाट्य कृतियों की संवाद और दृश्य योजना में रंगमंच का पूरा ध्यान रखा था ।

मार्क्सवादी चेतना ने हिंदी में यथार्थवादी नाटकों के नए युग का आरंभ हुआ । 1942-1943 में **इप्टा (इंडियन पीपुल्स थियेटर एसोसिएशन)** का गठन हुआ । द्वितीय विश्वयुद्धकालीन फासीवादी शक्तियों का रंगमंचीय विरोध करते हुए इस धारा ने सर्वहारा वर्ग के हितों की रक्षा और उसके लिए लड़ाई को अपना ध्येय माना । इप्टा ने ख्वाजा अहमद अब्बास के 'मैं कौन हूँ', हबीब तनवीर के 'शतरंज के मोहरे' आदि का मंचन कर जनवादी चेतना का प्रसार किया । इप्टा ने प्रेमचंद की रचनाओं का नाट्य मंचन भी किया ।

एक धारा **'एब्सर्ड नाटक'** (विसंगत नाटक) की चली । इनमें युगीन विसंगतियों अंधविश्वासों, निरर्थक प्रसंगों को प्रदर्शित कर जीवन को ग्रस्त करने वाली दिशाहीनता का अहसास कराया गया । मोहन

ड़ाकेश का 'मैड डिलाइट', 'छतरियाँ', मुद्राराक्षस का 'तिलचिट्टा' विपिन कुमार अग्रवाल का 'अपने देश में'; 'मौत एक कुत्ते की', राधाकृष्ण सहाय का 'अतःकिम्' 'खेल जारी खेल जारी' आदि प्रमुख एब्सर्ड नाटक हैं ।

हिंदी में नुक्कड़ नाटकों की एक नई परंपरा शुरू हुई । इसमें बिना किसी प्रेक्षागृह या साज-सज्जा के दर्शकों से जीवंत संवाद होता है । किसी भी खाली जगह पर ये नाटक खेले जाते हैं । ऐसे नाटक प्रायः अपने समय-स्थितियों पर व्यंग्य करते हैं ।

हिंदी के नाट्य साहित्य को भीष्म साहनी, सुरेंद्र वर्मा, ज्ञानदेव अग्निहोत्री, मणि मधुकर, मुद्राराक्षस, असगर वजाहत, स्वदेश दीपक आदि ने समृद्ध किया है ।

हिंदी नाटक और रंगमंच के बीच जीवंत संपर्क स्थापित करने में बी० बी० कारंत, इब्राहिम अल्काजी, सत्यदेव दुबे, श्यामनंदन जालान, बंसी कौल, एम० के० रैना, देवेंद्र राज अंकुर जैसे निर्देशकों की प्रतिभा का भी सुयोग प्राप्त हुआ है ।

उपन्यास

प्रेमचंद ने हिंदी कथा साहित्य को यथार्थवादी दृष्टि प्रदान की थी । उनका प्रभाव हिंदी के परवर्ती कथा साहित्य पर स्पष्ट रूप से है । पर जिन परवर्ती रचनाकारों ने प्रेमचंद का कोरा अनुकरण करने का प्रयास किया, वे सफल न हो सके । जिन्होंने प्रेमचंद से प्रेरणा ग्रहण कर स्वतंत्र राह अपनाई उन्हें ही स्थाई महत्त्व मिल पाया । यह सिलसिला आजादी के बाद तक चलता रहा ।

स्वतंत्रता पूर्व की प्रमुख औपन्यासिक कृतियों में अज्ञेय का 'शेखर : एक जीवनी', यशपाल का 'दादा-कामरेड', 'देशद्रोही', 'झूठा सच', 'दिव्या'; हजारी प्रसाद द्विवेदी का 'बाणभट्ट की आत्मकथा' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं । इनका संबंध क्रमशः मनोविश्लेषणवादी, यथार्थवादी और ऐतिहासिक उपन्यासों की धारा से है ।

मनोविश्लेषणवादी उपन्यास

यह परंपरा जैनेंद्र ने आरंभ की । इसके विकास में अज्ञेय के साथ इलाचंद्र जोशी का भी उल्लेखनीय योगदान रहा है, पर सर्वाधिक सफलता अज्ञेय को ही मिली । उनके उपन्यास 'शेखर : एक जीवनी' (1941) से हिंदी उपन्यास में महत्त्वपूर्ण मोड़ आया । उपन्यासों में आधुनिकता के दर्शन पहले पहल इसी कृति में होते हैं । अज्ञेय का शेखर एक व्यक्ति-चरित्र है, वह चौतरफा विद्रोह का आख्यान है । उसके मूल में है - स्वतंत्रता की खोज । जो कुछ भी उसके 'व्यक्तित्व' के मार्ग में बाधक है चाहे वह परंपरा, परिवार या समाज हो वह उससे विद्रोह कर देता है । अज्ञेय ने इस रचना से हिंदी उपन्यास को शिल्प और भाषा के स्तर पर नए मार्ग सुझाए । 'नदी के द्वीप', 'अपने-अपने अजनबी' उनकी अन्य औपन्यासिक कृतियाँ हैं ।

यथार्थवादी उपन्यास

यशपाल के उपन्यासों को इस श्रेणी में रख सकते हैं । उन पर मार्क्सवाद का गहरा प्रभाव था ।

'दादा कामरेड', 'देशद्रोही', 'पार्टी कामरेड' जैसे उपन्यास उन्होंने स्वतंत्रता के पूर्व लिखे । स्वतंत्रता के पश्चात उनका 'झूठा सच' प्रकाशित हुआ । इसके अतिरिक्त उन्होंने 'दिव्या' और 'अमिता' शीर्षक से ऐतिहासिक उपन्यास भी लिखे ।

यशपाल बहुत बड़े फलक पर जीवन के विविध रूपों, समस्याओं और जटिलताओं को उभारते हैं। 'झूठा सच' में स्वतंत्रता के संघर्ष और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की स्थितियों का यथार्थ अंकन है ।

सामाजिक यथार्थ चित्रण की दृष्टि से उपेंद्रनाथ 'अश्क' का 'गिरती दीवारें' उपन्यास भी बड़ा लोकप्रिय हुआ ।

ऐतिहासिक उपन्यास

इस श्रेणी में वृंदावनलाल वर्मा, चतुरसेन शास्त्री, राहुल सांकृत्यायन, हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं । ऐतिहासिक उपन्यासकारों में वृंदावन लाल वर्मा को विशेष ख्याति मिली । 'विराटा की पद्मिनी', 'झाँसी की रानी', 'गढ़ कुंडार' जैसे उपन्यास स्वतंत्रता से पहले और 'कचनार', 'मृगनयनी' आदि स्वतंत्रता के बाद प्रकाशित हुए ।

हजारी प्रसाद द्विवेदी का उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' स्वतंत्रता के पहले प्रकाशित हुआ । स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासों में 'चारुचंद्र लेख', 'पुनर्नवा' और 'अनामदास का पोथा' है । इन उपन्यासों में जितना इतिहास है उतनी ही संस्कृति भी । कल्पना का प्रचुर उपयोग द्विवेदी जी ने किया है । 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में तो इतिहास के व्याज से द्विवेदी जी मध्ययुगीन राजनीति-धर्मनीति की विडंबना उजागर करते हैं । वे इस उपन्यास में उन मूल्यों की खोज करते है जिसकी आवश्यकता काल और सीमा से परे प्रत्येक समाज को है ।

स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास

आंचलिक उपन्यास

इन उपन्यासों में कोई पात्र प्रमुख नहीं होता, बल्कि एक अंचल या क्षेत्र ही नायक की भूमिका में होता है । आंचलिक उपन्यासों में उस अंचल के संस्कार, रीति-रिवाज, समस्याएँ, जीवन स्थितियाँ सब कुछ प्रमुखता से उपस्थित हो जाता है । प्रारंभिक आंचलिक उपन्यासों में शिवपूजन सहाय के 'देहाती दुनिया' और उदयशंकर भट्ट के 'सागर, लहरें और मनुष्य' का नाम आता है ।

फणीश्वरनाथ रेणु के 'मैला आँचल' को इस श्रेणी का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास माना गया है । इसमें बिहार के पूर्णिया जिले या एक तरह से समूचे कोशी अंचल का अंकन है । यह आंचलिकता रेणु का वैशिष्ट्य है, सीमा नहीं । 'मैला आँचल' में आजादी से पहले और तुरंत बाद की राजनीतिक स्थितियों पर सतर्क टिप्पणियाँ हैं । अवसरवादी राजनीति, जातिवाद, सांप्रदायिकता और भाई-भतीजावाद की समस्या को रेणु ने इस उपन्यास में बहुत पहले दिखा दिया था । उनका अन्य महत्तापूर्ण आंचलिक उपन्यास है 'परती परिकथा' ।

नागार्जुन का 'बलचनमा', 'रतिनाथ की चाची', 'नई पौध', राही मासूम रजा का 'आधा गाँव', भैरव प्रसाद गुप्त का 'गंगा मैया', 'सती मैया का चौरा', शिवप्रसाद सिंह का 'अलग-अलग वैतरणी', मणि मधुकर का 'सफेद मेमने' इस धारा के प्रमुख उपन्यास हैं। इनके अतिरिक्त देवेंद्र सत्यार्थी, रामदरश मिश्र, शैलेश मटियानी, श्रीलाल शुक्ल आदि भी इस धारा के स्मरणीय कथाकार हैं।

मनोवैज्ञानिक उपन्यास

इस काल के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में धर्मवीर भारती का 'गुनाहों का देवता' अत्यंत चर्चित उपन्यास रहा है। अपनी कैशोर भावुकता और रूमानियत के कारण इसका एक बड़ा पाठक वर्ग हमेशा तैयार रहा है। देवराज का उपन्यास 'अजय की डायरी' भी इसी धारा का उपन्यास है।

सामाजिक उपन्यास

इस काल के नवीन सामाजिक चेतना के उपन्यासकारों में अमृतराय, अमृतलाल नागर, भगवतीचरण वर्मा, भीष्म साहनी, राजेंद्र यादव आदि हैं। अमृत राय का 'बीज', 'हाथी के दाँत' आदि वर्गसंघर्ष और जनवादी चेतना के उपन्यास हैं। अमृतलाल नागर के उपन्यासों में अद्भुत किस्सागोई है। 'बूँद और समुद्र', 'अमृत और विष', 'नाच्यो बहुत गोपाल' और 'मानस का हंस' उनके उल्लेखनीय उपन्यास हैं। भीष्म साहनी का 'तमस' विभाजन की पीड़ा का मार्मिक आख्यान प्रस्तुत करता है। भगवती चरण वर्मा के 'भूले-बिसरे चित्र', 'रेखा', 'सबहिं नचावत राम गुसाईं' जैसे उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ तीखेपन के साथ प्रस्तुत नहीं है, पर उस कालावधि का व्यापक परिचय उनके उपन्यासों में मिलता है। राजेंद्र यादव का 'उखड़े हुए लोग' 'सारा आकाश' जैसी रचनाओं में आदर्शवादी सपनों के टूटने और पूरी सामाजिक व्यवस्था पर पड़ने वाले दबावों का अंकन है। मन्नू भंडारी के साथ मिलकर उन्होंने 'एक इंच मुस्कान' की रचना की। यह उपन्यास खंडित व्यक्तित्व वाले आधुनिक व्यक्तियों की प्रेम ट्रैजडी है।

इसी काल के आधुनिकता बोध वाले उपन्यासों में मोहन राकेश का 'अंधेरे बंद कमरे', मन्नू भंडारी का 'आपका बंटी', निर्मल वर्मा का 'वे दिन', 'लाल टीन की छत', कृष्णा सोबती का 'सूरजमुखी अंधेरे के' के अतिरिक्त कृष्ण बलदेव वैद, जगदंबा प्रसाद दीक्षित, उषा प्रियंवदा आदि के उपन्यासों का उल्लेख किया जा सकता है।

हिंदी उपन्यास को समृद्ध करने में कमलेश्वर, मनोहर श्याम जोशी, विनोद कुमार शुक्ल, राजकमल चौधरी, मृदुला गर्ग, रवींद्र कालिया, गिरिराज किशोर, मंजूर एहतेशाम, असगर वजाहत, लक्ष्मीधर मालवीय, अभिमन्यु अनत, पंकज बिष्ट, सुरेंद्र वर्मा, मैत्रेयी पुष्पा, ज्ञान चतुर्वेदी, अलका सारावगी आदि रचनाकारों का भी उल्लेखनीय योगदान है।

कहानी

नई कहानी

हिंदी में 1955 के आस-पास 'नई कहानी' आंदोलन आरंभ हुआ। नामवर सिंह ने निर्मल वर्मा की कहानी 'परिंदे' को नई कहानी आंदोलन की पहली रचना माना है। नई कहानी आंदोलन की त्रयी के

रूप में मोहन राकेश, राजेंद्र यादव और कमलेश्वर का नाम लिया जाता है । 'नई कहानी' का नयापन नई संवेदना, नई दृष्टि और नए रूपबंध में है । स्वातंत्र्योत्तर भारत में नए शहरों का उदय, शहरों की ओर पलायन, मध्यवर्ग का विस्तार, औद्योगिकीकरण, मोहभंग और अकेलापन आदि ने जिन दबावों का निर्माण किया, 'नई कहानी' उसी की उपज है । 'नई कहानी' में सामाजिक परिवर्तनों, विघटित मूल्यों, टूटते संबंधों का मार्मिक अंकन है ।

मोहन राकेश की कहानियों में जीवन के द्वंद्वों और अंतर्द्वंद्वों का चित्रण है । वे 'तनाव' के कथाकार हैं । 'मलबे का मालिक, 'एक और जिंदगी', 'पाँचवे माले का फ्लैट', 'जख्म', 'जानवर और जानवर' आदि उनकी चर्चित कहानियाँ हैं । राजेंद्र यादव के यहाँ आधुनिक भावबोध को व्यापक सामाजिक परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास है । 'छोटे-छोटे ताजमहल', 'जहाँ लक्ष्मी कैद है' 'अभिमन्यु की आत्मकथा' आदि उनके प्रमुख संग्रह हैं । कमलेश्वर के यहाँ नारी समस्या को विशेष महत्त्व दिया गया है । 'राजा निरबंसिया', 'मांस का दरिया', 'नीली झील', 'दिल्ली में एक मौत' उनकी चर्चित कहानियों में से हैं । उनकी कहानियों में मूल्यों को लेकर सतत बेचैनी है ।

युगीन मनोदशा का सजीव अंकन भीष्म साहनी ने 'अमृतसर आ गया', 'चीफ की दावत', अमरकांत ने 'डिप्टी कलक्टरी', 'जिंदगी और जोंक' और 'दोपहर का भोजन', उषा प्रियंवदा ने 'वापसी', कृष्णा सोबती ने 'बादलों के घेरे', 'सिक्का बदल गया' जैसी कहानियों में किया है । निर्मल वर्मा, मन्नू भंडारी, धर्मवीर भारती आदि नई कहानी के श्रेष्ठ कथाकार हैं ।

शहरी मध्यवर्ग की इस अजनबियत से परे ग्रामांचल की कहानियों में जीवन की पूरी धमक सुनाई पड़ती है, वहाँ की समस्याएँ, जटिलताएँ और संघर्ष के स्वर भी । रेणु इस दृष्टि से विलक्षण कहानीकार हैं । उनकी कहानी 'तीसरी कसम' औपन्यासिक गरिमा लिए हुए है । 'रसप्रिया', 'लाल पान की बेगम', 'ठेस' आदि उनकी प्रमुख कहानियाँ हैं । जीवन का रंग-रंग, सुख-दुख और विश्वास उनकी कहानियों में सर्वत्र है । करुणा उनकी कहानियों का स्थाई भाव है । शिवप्रसाद सिंह की 'कर्मनाशा की हार', मार्कंडेय की 'गुलरा के बाबा', 'हंसा जाइ अकेला' भी उल्लेखनीय कहानियाँ हैं । कहानियों में निहित करुणा और सामाजिक यथार्थ के मर्मस्पर्शी अंकन की दृष्टि से शैलेश मटियानी भी एक उल्लेखनीय कथाकार हैं । हिंदी के कवियों–मुक्तिबोध, रघुवीर सहाय, नरेश मेहता, धर्मवीर भारती, श्रीकांत वर्मा, कुँवर नारायण, विनोद कुमार शुक्ल आदि ने भी कहानियाँ लिखीं ।

इस दौरान हिंदी में कई-कई कहानी आंदोलन चले । अकहानी (जगदीश चतुर्वेदी, गंगा प्रसाद विमल, प्रयाग शुक्ल आदि), सचेतन कहानी (महीप सिंह), सहज कहानी (अमृत राय), समांतर कहानी (कमलेश्वर), सक्रिय कहानी (राजेश वत्स), जनवादी कहानी (जनवादी लेखक संघ, रमेश उपाध्याय एवं अन्य) इनमें प्रमुख हैं ।

सातवें दशक में हिंदी में कहानी लेखकों की एक नई पीढ़ी प्रवेश करती है । ज्ञानरंजन, दूधनाथ सिंह, काशीनाथ सिंह, महेंद्र भल्ला, रवींद्र कालिया आदि उनमें प्रमुख हैं । भारत–चीन युद्ध, लोहिया की राजनीति, नक्सलबाड़ी जैसी स्थितियों ने नेहरू युग की समाप्ति के साथ परिवर्तन की माँग को और बल प्रदान किया । विडंबनापूर्ण स्थितियों से उपजा आक्रोश इस काल की कहानियों में आसानी से देखा जा

सकता है ।

समकालीन कहानी ने नक्सलवाड़ी की पृष्ठभूमि से आगे बढ़ते हुए वर्तमान समय के आर्थिक दबावों में विघटित हुए मूल्यों, प्रतिरोध की संभावनाओं और नव साम्राज्यवादी ताकतों के फैले हुए जाल को विशिष्ट कौशल के साथ प्रस्तुत किया है । इस दौर के कहानीकारों में उदय प्रकाश, संजीव, अखिलेश, स्वयंप्रकाश, गिरिराज किशोर, चंद्रकिशोर जायसवाल, मधुकर सिंह, रामधारी सिंह दिवाकर, विजयकांत, अरुण प्रकाश, मिथिलेश्वर, स्वदेश दीपक, असगर वजाहत, मंजूर एहतेशाम, मेहरुन्निसा परवेज, मृणाल पांडेय, शिवमूर्ति, प्रेम कुमार मणि, हृषीकेश सुलभ, अलका सारावगी आदि का उल्लेख किया जा सकता है ।

आलोचना एवं निबंध

शुक्लोत्तर आलोचना में एक प्रमुख नाम आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का है । द्विवेदी जी की पुस्तक 'हिंदी साहित्य की भूमिका' 1940 में प्रकाशित हुई थी, 1942 में उनकी पुस्तक 'कबीर' आई । इनके अतिरिक्त 'हिंदी साहित्य का आदिकाल', 'नाथ संप्रदाय', 'सूर साहित्य' आदि उनकी प्रमुख आलोचना पुस्तकें हैं ।

आचार्य द्विवेदी शुक्ल जी के मतों से कई जगहों पर अपनी असहमति व्यक्त करते हैं । भक्तिकाल के उदय का प्रश्न हो या कबीर के महत्त्व का, वे अपना मौलिक और सप्रमाण पक्ष प्रस्तुत करते हैं । उनके विचार से हिंदी साहित्य संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश साहित्यों और बौद्ध, जैन, नाथ, सिद्ध, संत आदि विभिन्न धर्मों-मतों से निर्मित एक समवेत भारतीय चिंताधारा का स्वाभाविक विकास है ।

उनके निबंधों पर यदि विचार करें तो एक ओर उनमें विद्वतापूर्ण अनुसंधानात्मक परिश्रम दिखाई पड़ता है, वहीं सरसता, आत्मीयता और विनोद भी । 'नाखून क्यों बढ़ते हैं', 'आम फिर बौरा गए', 'अशोक के फूल', 'एक कुत्ता और एक मैना', 'कुटज', 'शिरीष के फूल' आदि उनके चर्चित निबंध हैं । उनके निबंधों में सांस्कृतिक-साहित्यिक संदर्भ बिखरे पड़े हैं ।

आचार्य द्विवेदी मानवीय प्रश्नों, सदर्भों व चिंताओं को सामने रखकर मनुष्य की जिजीविषा, जययात्रा को निरंतर चिह्नित करते रहते हैं । उनमें पांडित्य का आतंक नहीं, एक फलदार वृक्ष की स्नेहिल छाया है । अपने निबंधों में वे इतिहास की यात्रा वर्तमान को सुंदर बनाने के लिए ही करते हैं ।

आचार्य नंददुलारे वाजपेयी शुक्लोत्तर आलोचना के प्रमुख हस्ताक्षर हैं । उन्होंने छायावादी कविता के सामाजिक संदर्भों की व्याख्या की । प्रसाद, पंत और निराला को लेकर छायावाद की बृहतत्रयी की घोषणा इन्होंने ही की थी । इनकी आलोचना में मार्मिक व्याख्या, विश्लेषण के साथ ही तर्क-वितर्क दोनों मौजूद हैं । 'महाकवि सूरदास', 'हिंदी साहित्य-बीसवीं शताब्दी', 'जयशंकर प्रसाद', 'प्रेमचंद', 'आधुनिक साहित्य' आदि इनकी प्रमुख पुस्तकें हैं ।

डॉ० नगेंद्र भी इस काल के प्रमुख आलोचक हैं । 'सुमित्रानंदन पंत', 'साकेत-एक अध्ययन', 'आधुनिक हिंदी नाटक', 'रीतिकाव्य की भूमिका', 'विचार और विवेचन', 'रस सिद्धांत', 'आस्था के चरण' आदि उनकी प्रमुख पुस्तकें हैं । वे मूलतः रसवादी आलोचक हैं । उनकी आलोचना में उलझन नहीं है । उनकी शैली तर्कपूर्ण और विश्लेषणात्मक है ।

डॉ० लक्ष्मीनारायण सुधांशु शुक्लोत्तर आलोचना के प्रमुख स्तंभ हैं । 'काव्य में अभिव्यंजनावाद' और 'जीवन के तत्त्व और काव्य के सिद्धांत' इनकी प्रमुख आलोचना पुस्तकें हैं । हिंदी की शास्त्रीय और व्यावहारिक आलोचना को समृद्ध करने में इनकी भूमिका महत्त्वपूर्ण है ।

आचार्य नलिन विलोचन शर्मा ने 'साहित्य का इतिहास दर्शन' नामक पुस्तक के द्वारा हिंदी में साहित्य के इतिहास दर्शन पर गंभीर बहस आरंभ की । इसके अतिरिक्त इन्होंने प्रपद्यवाद (नकेनवाद) की सैद्धांतिकी को भी आधार दिया । व्यावहारिक आलोचना के क्षेत्र में अपनी महत्त्वपूर्ण पुस्तक 'हिंदी उपन्यास : विशेषतः प्रेमचंद' तथा 'दृष्टिकोण एवं मानदंड' नामक प्रकाशित महत्त्वपूर्ण निबंध संग्रहों के कारण शुक्लोत्तर आलोचकों में इनकी विशेष प्रसिद्धि है ।

प्रगतिवाद के दौर में हिंदी में मार्क्सवादी आलोचना आरंभ हुई । शिवदान सिंह चौहान, प्रकाशचंद्र गुप्त और रामविलास शर्मा इसका सूत्रपात करने वाले थे । शिवदान सिंह चौहान के संपादन में ही प्रसिद्ध पत्रिका 'आलोचना' पहले-पहल निकली । रामविलास शर्मा ने मार्क्सवादी दृष्टि से समूचे हिंदी साहित्य की परंपरा की नई व्याख्या प्रस्तुत की; उन्होंने भारतेंदु हरिश्चंद्र, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, रामचंद्र शुक्ल, प्रेमचंद और निराला के महत्त्व से हिंदी जगत को परिचित कराया । रामविलास जी की आलोचना का ऐश्वर्य निराला साहित्य के मूल्यांकन में दिखाई पड़ता है । निराला उनके प्रिय कवि हैं । 'निराला की साहित्य साधना' का पहला खंड निराला की जीवनी है । रामविलास जी ने इसके माध्यम से जीवनी साहित्य का एक आदर्श प्रस्तुत किया तथा गद्य की सृजनात्मक क्षमताओं से हिंदी जगत को परिचित कराया है । शास्त्रीय भाषा से दूर बोल-चाल के गद्य में जटिल से जटिल बातों को समझा देने में रामविलास जी बेजोड़ हैं ।

आगे के प्रगतिशील मार्क्सवादी आलोचकों में मुक्तिबोध और नामवर सिंह प्रमुख हैं । आधुनिक हिंदी कविता के प्रमुख हस्ताक्षर मुक्तिबोध ने विशुद्ध आलोचक न होते हुए भी हिंदी आलोचना को समृद्ध किया है । मुक्तिबोध की 'कामायनी : एक पुनर्विचार', 'एक साहित्यिक की डायरी', 'नई कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध' महत्त्वपूर्ण पुस्तकें हैं । मुक्तिबोध ने अपनी आलोचना में जड़ीभूत सौंदर्याभिरुचि की आलोचना की तथा नई कविता के पक्ष में तर्क प्रस्तुत किए ।

नामवर सिंह की प्रमुख पुस्तकें हैं - 'छायावाद', 'हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योग', 'आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ', 'कविता के नए प्रतिमान', 'कहानी: नई कहानी', 'दूसरी परंपरा की खोज', 'वाद विवाद संवाद' आदि । आलोचना अपने आप में प्रतिरचना है । रामचंद्र शुक्ल, हजारी प्रसाद द्विवेदी, रामविलास शर्मा की परंपरा में नामवर सिंह इसे सिद्ध करते हैं । छायावाद का मूल्यांकन करते हुए इसे उन्होंने 'शक्ति काव्य' की संज्ञा दी । नई कविता के प्रसंग में मुक्तिबोध का सम्यक मूल्यांकन किया । हिंदी में कहानी आलोचना की विधिवत शुरुआत की, साथ ही अपने व्याख्यानों से समूचे देश में प्रगतिशील दृष्टि के विस्तार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई । व्यापकता और गहराई, सहृदयता और विवेक उनके यहाँ सर्वत्र है । 'दूसरी परंपरा की खोज' में उन्होंने आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अवदान का विश्लेषण किया है ।

अपनी टिप्पणियों से अज्ञेय ने भी नई कविता के पक्ष में तर्क प्रस्तुत किए । 'तार सप्तक', 'दूसरा सप्तक', 'पुष्करिणी' आदि की भूमिकाओं तथा 'आत्मनेपद', 'हिंदी साहित्य : विविध परिदृश्य', 'अद्यतन' आदि से उनका आलोचक रूप प्रकट होता है ।

हिंदी आलोचना के विकास में देवीशंकर अवस्थी, विजयदेव नारायण साही, बच्चन सिंह, जगदीश पांडेय, रामस्वरूप चतुर्वेदी, कुँवर नारायण, अशोक वाजपेयी, मलयज, रमेशचंद्र शाह, विजयमोहन सिंह, प्रभाकर श्रोत्रिय, मैनेजर पांडेय, सुरेंद्र चौधरी, नंदकिशोर नवल, कुमार विमल आदि का अपने-अपने क्षेत्रों में उल्लेखनीय योगदान है ।

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी निबंधकारों में अज्ञेय, प्रभाकर माचवे, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, निर्मल वर्मा प्रमुख हैं । विद्यानिवास मिश्र ने जीवन के विविध सांस्कृतिक पक्षों को रागात्मकता के साथ अंकित किया है । 'तुम चंदन हम पानी', 'मेरे राम का मुकुट भीग रहा है' आदि इनके चर्चित निबंध हैं । विद्यानिवास मिश्र और कुबेरनाथ राय के निबंध आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों की परंपरा में जान पड़ते हैं । अज्ञेय और निर्मल वर्मा के निबंध चिंतनपरक गद्य के श्रेष्ठ नमूने हैं । इनका गद्य परिमार्जित, तरल और पारदर्शी है । दोनों ही जीवन की नई-नई अंत:धाराओं से जुड़कर व्यापकता प्राप्त करते हैं तथा समाज और संस्कृति की गहराई में जाकर मानवीय परिस्थितियों की पड़ताल करते हैं ।

अन्य गद्य विधाएँ

रेखाचित्र, संस्मरण, जीवनी, आत्मकथा, यात्रावृत्तांत जैसी विधाएँ पहले ही आरंभ हो चुकी थीं । रिपोर्ताज का एक नई विधा के रूप में आरंभ आजादी के बाद के साहित्य में ही हुआ । शिवदान सिंह चौहान का रिपोर्ताज 'लक्ष्मीपुत्र', 'मौत के खिलाफ जिंदगी की लड़ाई' हिंदी के आरंभिक रिपोर्ताज हैं । रांगेय राघव के रिपोर्ताज 'तूफानों के बीच में' में बंगाल के अकाल का मार्मिक अंकन है । आगे चलकर रेणु, धर्मवीर भारती, विष्णुकांत शास्त्री आदि ने भी इस विधा को समृद्ध किया ।

अज्ञेय और निर्मल वर्मा के यात्रा वृत्तांतों, क्रमश: 'अरे यायावर रहेगा याद', 'एक बूँद सहसा उछली' तथा 'चीड़ों पर चाँदनी' में संवेदना और बौद्धिकता का साहचर्य दिखाई पड़ता है । इसी तरह हरिवंश राय बच्चन की आत्मकथा 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ', 'नीड़ का निर्माण फिर', 'बसेरे से दूर', 'दशद्वार से सोपान तक', पांडेय बेचन शर्मा उग्र की 'अपनी खबर' आत्मकथा विधा की प्रमुख रचनाएँ हैं । जीवनी साहित्य में रामविलास शर्मा द्वारा लिखी गई निराला की जीवनी, विष्णु प्रभाकर द्वारा लिखित शरतचंद्र की जीवनी 'आवारा मसीहा', अमृतराय और मदन गोपाल द्वारा लिखित प्रेमचंद की जीवनियाँ प्रमुख हैं । संस्मरण साहित्य में महादेवी वर्मा की पुस्तक 'पथ के साथी', अज्ञेय की कृति 'स्मृतिलेखा', विष्णु प्रभाकर की 'मेरे अग्रज : मेरे मीत', रेणु का 'वन तुलसी की गंध' आदि उल्लेखनीय हैं । इस काल में हरिशंकर परसाई, शरद जोशी, ज्ञान चतुर्वेदी आदि ने व्यंग्य लेखन को नई पहचान दी ।

❑❑❑

अभ्यास

कक्षा – 11

आदिकाल

1. आदिकालीन राजनीतिक परिस्थितियाँ कैसी थीं ?
2. सिद्ध कौन थे ?
3. नाथ कौन थे ?
4. वीरगाथा काल के नामकरण के लिए शुक्ल जी ने क्या तर्क दिए थे ?
5. पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता के संबंध में विद्वानों के क्या विचार हैं ?
6. वीरगाथा काल की सामान्य विशेषताओं का परिचय दें ।
7. टिप्पणी लिखें –
   (क) जैन साहित्य (ख) विद्यापति (ग) अमीर खुसरो (घ) संदेश रासक

भक्तिकाल

1. भक्ति आंदोलन का उदय किस प्रकार हुआ ?
2. सूफी मत का परिचय दें ?
3. सूफी काव्यधारा की प्रमुख कृतियों एवं उनके रचनाकारों के नाम लिखें ।
4. सगुण और निर्गुण भक्ति में क्या अंतर है ?
5. 'अष्टछाप' क्या है ?
6. रामभक्ति शाखा के प्रमुख कवि कौन-कौन हैं ? उनकी रचनाओं के नाम लिखें ।
7. टिप्पणी लिखें –
   (क) श्री संप्रदाय (ख) रैदास (ग) नानक (घ) रसखान (ङ) मीराबाई

रीतिकाल

1. रीतिकालीन सामाजिक-राजनीतिक स्थितियाँ कैसी थीं ?
2. रीतिबद्ध और रीतिमुक्त काव्यधारा में क्या अंतर है ?
3. रीतिकालीन काव्य प्रवृत्तियों का परिचय दें ।
4. रीतिमुक्त काव्यधारा की क्या विशेषताएँ हैं ?
5. रीतिसिद्ध काव्यधारा से आप क्या समझते हैं ?
6. टिप्पणी लिखें -
   (क) केशव (ख) पदमाकर (ग) घनानंद (घ) बिहारी (ङ) भूषण

कक्षा - 12

आधुनिक काल

भारतेंदु युग

1. आधुनिक काल को गद्यकाल क्यों कहा जाता है ?
2. नवजागरण का क्या अर्थ है ? इसके पीछे कौन से कारक रहे हैं ?
3. हिंदी गद्य के विकास में ईसाई मिशनरियों की क्या भूमिका रही है ?
4. 'भारतेंदु मंडल' से आप क्या समझते हैं ?
5. भारतेंदु युग में हिंदी आलोचना का विकास किस प्रकार हुआ ?
6. भारतेंदु हरिश्चंद्र के अवदान का परिचय दें ।
7. टिप्पणी लिखें -
   (क) देवकीनंदन खत्री (ख) प्रतापनारायण मिश्र (ग) खड्ग विलास प्रेस (घ) भारतेंदुयुगीन पत्रकारिता
   (ङ) फोर्ट विलियम कॉलेज

द्विवेदी युग

1. हिंदी साहित्य को महावीर प्रसाद द्विवेदी के क्या अवदान हैं ?
2. द्विवेदीयुगीन काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों का परिचय दें ।
3. 'सरस्वती' पत्रिका का महत्त्व बताएँ ।
4. द्विवेदीयुगीन निबंधों की क्या विशेषताएँ हैं ?
5. हिंदी की आरंभिक कहानियों एवं उनके लेखकों के नाम लिखें ।
6. द्विवेदीयुगीन आलोचना में किन प्रवृत्तियों के दर्शन होते हैं ?
7. टिप्पणी लिखें –

   (क) रामनरेश त्रिपाठी (ख) हरिऔध (ग) मैथिलीशरण गुप्त

छायावाद

1. छायावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ क्या हैं ?
2. हिंदी कहानी के इतिहास में प्रेमचंद का क्या स्थान है ?
3. हिंदी आलोचना को शुक्लजी के क्या अवदान हैं ?
4. इस युग के प्रमुख निबंधकारों का परिचय दें ।
5. सुमित्रानंदन पंत के काव्य की क्या विशेषताएँ हैं ?
6. जयशंकर प्रसाद के नाटकों की क्या विशेषताएँ हैं ?
7. टिप्पणी लिखें –

   (क) छायावादी काव्य में प्रकृति (ख) महादेवी वर्मा (ग) सुभद्रा कुमारी चौहान (घ) जैनेंद्र

छायावादोत्तर काल

1. प्रगतिवाद का क्या आशय है ?
2. हिंदी के प्रमुख प्रगतिवादी कवि कौन-कौन हैं ?
3. प्रगतिवादी कविताओं में प्रकृति चित्रण किस रूप में हुआ है ?
4. छायावादोत्तर काल में कविता की कौन-कौन सी प्रवृत्तियाँ दिखाई पड़ती हैं ?
5. प्रयोगवादी कविता की क्या विशेषताएँ हैं ?
6. अज्ञेय के कवि व्यक्तित्व की क्या विशिष्टता है ?
7. 'तार सप्तक' के कवियों के नाम लिखें ।
8. 'दूसरा सप्तक' के कवि कौन-कौन थे ?
9. नई कविता की क्या विशिष्टता है ?
10. समकालीन कविता का परिचय अपने शब्दों में दें ।
11. 'नई कहानी' की प्रमुख विशेषताओं का परिचय दें ।
12. नई कहानी आंदोलन के प्रमुख कहानीकार कौन-कौन हैं ?
13. आंचलिकता से आप क्या समझते हैं ?

14. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों की क्या विशेषता है ?
15. भारतेंदु युग से लेकर आज तक के बीच के दस उत्कृष्ट उपन्यासकारों और उनके उपन्यासों की सूची बनाएँ ।
16. टिप्पणी लिखें -

(क) हरिवंश राय बच्चन (ख) नकेनवाद (ग) एब्सर्ड नाटक (घ) रामविलास शर्मा
(ङ) धर्मवीर भारती (च) नामवर सिंह

❑❑❑

BIHAR STATE TEXTBOOK PUBLISHING CORPORATION LTD., PATNA
बिहार स्टेट टेक्सटबुक पब्लिशिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड, बुद्ध मार्ग, पटना
आवरण पृष्ठ श्री साईं ऑफसेट, संदलपुर, पटना-7 द्वारा मुद्रित ।